महामति श्री प्राणनाथजी प्रणीत

श्री कलश

प्रकाशक
श्री ५ नवतनपुरीधाम
जामनगर

निजानन्दाचार्य श्री देवचन्द्रजी महाराज

महामति श्री प्राणनाथजी महाराज

श्री कलस

(गुजराती)

रासनो प्रकाश थयो, ते प्रकासनो प्रकास ।
ते उपर वली कलस धरूं, तेमां करुं ते अति अजवास ॥ १

इन्द्रावती कहती है, वृन्दावनमें श्रीकृष्णजी द्वारा की गई अखण्ड रासलीलाका प्रकाश रास ग्रन्थमें प्रकाशित हुआ. उस रासका प्रकाश (स्पष्टीकरण) प्रकाश ग्रन्थमें किया गया. इन दोनों रास तथा प्रकाश ग्रन्थोंके ऊपर, मन्दिरोंके शिखर पर कलशकी भाँति कलश ग्रन्थ प्रस्तुत कर रही हूँ. यह कलश ग्रन्थ व्रज, रास तथा परमधामकी रहस्यमयी लीलाओंसे भरा हुआ है. अब मैं इसका स्पष्टीकरण कर रही हूँ.

मारा साथ सुणो एक वातडी, कह्यो सतनो में सार ।
ए सारनो सार देखाडी, जगवुं ते मारा आधार ॥ २

हे मेरे सुन्दरसाथजी ! एक रहस्यमयी बात सुनो. मैंने रास तथा प्रकाश ग्रन्थोंमें श्रीकृष्णजीकी व्रज तथा रासकी सत्य (अखण्ड) लीलाओंका साररूप वर्णन किया है. अब मैं उसका भी सार तत्त्व दिखा कर मेरे आधार स्वरूप सुन्दरसाथको जगा दूँ.

श्री धणिए आवी मुने धामथी, जगवी ते जुगते करी ।
ते विध सरवे रुदे अंतर, चित मांहें चोकस धरी ॥ ३

श्रीश्यामाजीके अवतार सद्‌गुरु श्रीदेवचन्द्रजीने परमधामसे आकर मेरी आत्माको युक्ति पूर्वक जागृत किया. उस युक्ति (पद्धति) को मैंने अपने चित्तमें अच्छी तरह ग्रहण किया.

मुने मेलो थयो मारा धणी तणो, ते वीतकनी कहुं विध ।
ते विध सरवे कही करी, दऊं ते घरनी निध ॥ ४

नवतनपुरीमें जिस प्रकार मेरा मिलन मेरे धनी सद्‌गुरुके साथ हुआ, मैं उस वृत्तान्तका वर्णन कर रही हूँ. उसे सब प्रकारसे कह कर, परमधामकी अखण्ड निधि–तारतमज्ञान तुम्हें प्रदान कर रही हूँ.

में जे दिन चरण परसियां, मुने कह्युं तेह ज दिन ।
दया ते कीधी अति घणी, पण मुने जोर थयुं सुपन ॥ ५

मैंने जिस दिन सद्‌गुरुके चरण कमलोंका स्पर्श किया, उसी दिन उन्होंने मुझ पर अति कृपा कर सब तथ्योंसे अवगत करवाया. किन्तु अज्ञानरूपी निद्रा एवं बाल्यावस्थाके कारण मुझ पर सांसारिक मायाका प्रभाव विशेषरूपसे छाया रहा.

मोहे समागम पीउसुं, वाले पूछियो विचार ।
आपोपुं तमे ओलखी, प्रगट कहो प्रकार ॥ ६

सद्‌गुरुने अक्षरातीत श्रीकृष्णके दर्शनका प्रसङ्ग उल्लेख करते हुए कहा, जब मुझे श्रीकृष्णजीके दर्शन (समागम) हुए तो उन्होंने मुझसे विचारपूर्वक पूछा, क्या तुम अपनी आत्माको पहचानते हो ? यदि पहचानते हो तो विस्तार पूर्वक कहो.

[सद्‌गुरु श्री देवचन्द्रजीको अक्षरातीत श्रीकृष्णजीके साक्षात्कारके समय श्रीकृष्णजी एवं सद्‌गुरुके सम्वादका यह प्रसङ्ग हैं. पुनः यह प्रसङ्ग आत्मा

और परमात्माका सम्वाद है. सद्‌गुरु स्वयं इन्द्रावतीके हृदयमें विराजमान हैं और श्रीकृष्णजीके साथ हुए सम्वादको इन्द्रावती द्वारा व्यक्त कर रहे हैं.]

आ मंडल तां तमे जोइयुं, कहो वीतकनी जे वात ।
आ भोमनो विचार कहो, ए सुपन के साख्यात ॥ ७

पुनः पूछा, इस संसाररूपी मण्डलको तुमने ठीकसे देखा है. अब इस जगतका रहस्य मुझे बताओ. विचारपूर्वक कहो कि यह संसार स्वप्नवत् (नाशवान्) है या साक्षात् (अविनाशी) ?

आ जोई जे तमे रामत, कहो रामत केही पर ।
आ भोम केही तमे कोण छो, किहां तमारा घर ॥ ८

यह संसारका खेल तुमने देखा है. कहो, यह खेल किस प्रकारका है ? यह भूमि (ब्रह्माण्ड) क्या है ? इसकी रचना कैसे हुई है ? तुम कौन हो और तुम्हारा मूल घर कहाँ है ?

आ किहे अस्थानक तमे आवियां, जागीने करो विचार ।
नार तुं कोण पीउ तणी, कहो एह तणो विस्तार ॥ ९

तुम किस स्थान पर आए हो ? जागृत होकर विचार करो कि तुम किस धनीकी अर्धांगिनी हो ? यह सब विस्तार पूर्वक समझाओ.

तमे वीतकनुं मुने पुछ्युं, सुणो कहुं तेणी वात ।
आ मंडल तां दीसे सुपन, पण थै लाग्युं साख्यात ॥ १०

उस समय प्रत्युत्तर देते हुए सद्‌गुरुने कहा, हे धनी ! आपने जो वृत्तान्त मुझसे पूछा है, उसकी वर्तमान स्थिति आपको कह रहा हूँ. यह संसार तो स्वप्नवत् दीखता है. परन्तु (इसमें मग्न होने पर) साक्षात् प्रतीत होता है.

निकल्युं न जाय ए मांहेंथी, क्यांहे न लाभे छेह ।
एमां पग पंखीनो दीसे नहीं, कहुं सनंध सरवे तेह ॥ ११

इस संसारसे छुटकारा पाना संभव नहीं है. इसका अन्त कहीं भी दिखाई

नहीं देता है. इसमें आत्मारूपी पक्षीका पग भी दिखाई नहीं देता, अर्थात् हम आत्माको पहचान नहीं पाते. अब मैं इसका विवरण दे रहा हूँ.

आ भोमने नव ओलखुं, नव ओलखुं मारुं आप ।
घर तणी मुने सुध नहीं, सांभरे नहीं मारो नाथ ॥ १२

मुझे इस संसार (भूमि) की पहचान नहीं है. मैं स्वयं अपने आपको भी नहीं पहचानता हूँ. मुझे अपने मूल घरकी भी सुधि नहीं है. मेरे प्रियतम धनी कौन है ? इसका स्मरण भी मुझे नहीं है.

आ मंडल दीसे छे पाधरो, ए तां मूल विना विस्तार ।
रामतनो कोई कोहेडो, न आवे ते केमे पार ॥ १३

देखनेमें यह संसार सीधा और सरल लगता है किन्तु यह मूल बिनाका ही विस्तार है. यह खेल एक पहेलीकी भाँति उलझनपूर्ण है कि किसी भी प्रकार इसका पार पाया नहीं जाता.

आ मंडल मोटो रामत घणी, जुओ ऊभो केम अचंभ ।
एणे पाइए पगथी जिहां जोइए, तिहां दीसे ते पांचे थंभ ॥ १४

इस संसारका क्षेत्र अधिक विशाल (गहन) है. इसमें मायावी छलकपटपूर्ण खेल भी अत्यधिक हैं. इसके बारेमें विचार करने पर ऐसा लगता है कि यह विचित्रतासे भरा हुआ है अर्थात् ऊपर निराकार और नीचे जल है. इसके मूल आधार पर विचार कर जब हम देखते हैं तो वहाँ पाँच तत्त्व (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश) स्तम्भके रूपमें दिखाई देते हैं.

पांचे ते जोइए ज्यारे जुजवा, न लाभे केहनो पार ।
भेला ते करी वली जोइए, तो रची ऊभो संसार ॥ १५

इन पाँचों तत्त्वोंको यदि अलग-अलग रूपसे देखा जाए तो उनका अन्त ही नहीं दिखाई देता. किन्तु जब इनको एकत्रित करके देखते हैं तो लगता है कि वस्तुतः यह संसार पाँच तत्त्वों द्वारा रचा गया है और उन्हीं पर आधारित है.

मांहें थंभ एके थिर नहीं, फरे ते पांचे फेर ।
एनो फेरवणहार लाधे नहीं, मांहें ते अति अंधेर ॥ १६

इन पाँचों तत्त्वोंमें–से एक भी तत्त्व (स्तम्भ) स्थिर नहीं है. ये पाँचों अपने–अपने ढंगसे चलायमान हैं. उन्हें फिरानेवाला कोई मिलता ही नहीं है. इनमें तो चारों ओर अज्ञानरूपी अन्धकार छाया हुआ है.

पांचे ते फरे फेर जुजवा, थाय नहीं पग थोभ ।
ए अजाडी कोई भांतनी, ते नहीं जोवा जोग ॥ १७

ये पाँचों तत्त्व अलग–अलग होकर चक्कर लगा रहे हैं. वास्तवमें उनमें स्थिरता नहीं है. यह वस्तुतः असमन्जसमें डाल देनेवाली एक प्रकारकी खाई है. इसलिए यह (माया) देखने योग्य नहीं है.

ए अजाडी बंध उथमे, बांधी नाखे ततकाल ।
द्रष्ट दीठे बंध पडे, एहवी देखीती जमजाल ॥ १८

इस विरान संसारकी खाई उलटे बन्धन वाली है. यह जन्म लेते ही मनुष्यको तत्काल अपने बन्धनमें बाँधकर उसे फँसा लेती है. दृष्टि पड़ने मात्रसे लोग इसमें बँध जाते हैं. इस प्रकार यह प्रत्यक्ष यमजाल है.

काली ते रात कोई उपनी, सूझे नहीं सलसांध ।
दिवस तिहां दीसे नहीं, मांहें ते फरे सूरजने चांद ॥ १९

मानों यह काली रात्रि उत्पन्न हुई हो, इसके कोई जोड़ (बन्धन) सूझते नहीं हैं. सूर्य और चन्द्रमा इसमें उदय अस्त हो रहे हैं तथापि यहाँ पर दिन (आत्म–ज्ञान) नजर नहीं आता.

दिवस नहीं अजवास नहीं, ए अंधेरना तिमर ।
एणे कांई सूझे नहीं, आ भोम आपना घर ॥ २०

इसमें न ज्ञानरूपी दिन है न ही उसका प्रकाश है. यहाँ तो गहन अन्धकार (अज्ञान) फैला हुआ है. आत्माको न यहाँकी भूमिकी पहचान होती है और न ही परमधामकी पहचान होती है.

अऊठ कोट सूरज फरे, फरे रात ने प्रभात ।
एकवीस ब्रह्मांड इंडा मधे, एके मांहें न थाय अजवास ॥ २१

पचास करोड़ योजनवाली पृथ्वीमें केवल साड़े तीन करोड़ योजन पर्यन्त ही सूर्य घूमता है जिससे रात और दिनका निर्माण होता है. इस अन्धकारमय संसार (मण्डल) में कुल मिलाकर इक्कीस ब्रह्माण्ड हैं. परन्तु इनमें-से एकमें भी ज्ञानरूपी सूर्यका प्रकाश दिखाई नहीं देता.

सुध एणे थाय नहीं, सामुं रुदे थाय अंधेर ।
अजवास ए पोहोंचे नहीं, दीठे चढे सामा फेर ॥ २२

सूर्य तथा चन्द्रके प्रकाश द्वारा आत्मज्ञानकी सुधि नहीं होती है. ज्ञानका प्रकाश न होनेके कारण हृदयमें अज्ञानरूप अन्धकार बना रहता है. मायावी सूर्यका यह प्रकाश हृदय तक नहीं पहुँचता. सूर्योदय होते ही मनुष्य सांसारिक कार्यके चक्रमें फँस जाते हैं.

फरे षटरुत उस्नकाल, वरसा ने सीतकाल ।
नखत्र तारे फरे मंडल, फरे जीव ने जंजाल ॥ २३

छः ऋतुएँ बदलती रहतीं हैं. जिसमें कभी गर्मीकी ऋतु तो कभी ठंडीकी ऋतु, कभी वर्षा तो कभी शीत ऋतुका आगमन होता है. नक्षत्र तथा तारागण भी इसके अनुसार घूमते रहते हैं. इसके साथ-साथ जीव-जन्तु भी इस सांसारिक जञ्जालमें घूमते रहते हैं.

वाय वादल गाजे विजली, जलधारा न समाय ।
फेर खाय पांचे पाधरा, मांहेंना मांहें समाय ॥ २४

वर्षा ऋतुमें बादल दौड़ते हैं, बिजली गर्जना करती है. वर्षा होने पर पृथ्वी पर जलधाराएँ नहीं समातीं हैं. ये पाँचों तत्त्व अपने-अपने स्थान पर घूम रहे हैं और बादमें अन्दर ही अन्दर समा जाते हैं.

पांचे ते थै आवे पाधरा, जाणुं थासे ते प्रलेकाल ।
बल देखाडी आपणुं, थै जाय पंपाल ॥ २५

जब ये पाँचों तत्त्व एकत्रित होकर आते हैं तो ऐसा प्रतीत होता है मानों प्रलय

हो जाएगा. सब अपना प्रभाव दिखा कर बादमें नाश हो जाते हैं.

पांच ते थै आवे दोडतां, देखाडवा आकार ।
ततखिण ते दीसे नहीं, परपंच ए निरधार ॥ २६

इन पाँचों तत्त्वोंका मिश्रण होता है तो संसारका साकार रूप दिखाई देता है. जैसे ही ये अलग होते हैं तब कुछ भी दिखाई नहीं देता (वास्तवमें ये आधार रहित हैं). यही तो मायाका प्रपञ्च है.

ए पांचे थकी जे उपना, दीसे ते चौदे भवन ।
जीवन मांहें लाधे नहीं, जेनी इछाए उतपन ॥ २७

जब इन पाँचों तत्त्वोंसे उत्पन्न हुए चौदह लोक इस ब्रह्माण्डमें दिखाई देते हैं. परन्तु इनमें जीवकी उत्पत्ति करने वाला जीवन तत्त्व दिखाई नहीं देता अर्थात् जिनकी इच्छा मात्रसे यह संसार उत्पन्न होता है वह परमात्मा दिखाई नहीं देते.

एहनुं मूल डाल लाधे नहीं, ऊभो ते केणी अदाए ।
मांहें संध कोई सूझे नहीं, एमां दिवस न देखुं क्यांहे ॥ २८

इस संसारकी उत्पत्तिका मूल स्थान तथा उसके विस्तारका ज्ञान किसीको भी नहीं हुआ है कि यह किस प्रकार आधारहीन खड़ा है. उसमें कहाँ-कहाँ बन्धन (जोड़) हैं यह भी किसीकी समझमें नहीं आता. इस प्रकार इसमें दिवस जैसा ज्ञानका स्पष्ट प्रकाश कहीं भी दिखाई नहीं देता है.

सुर असुर मांहें फरे, पसु पंखी मनष ।
मछ कछ वनराय फरे, फरे जीव ने जंत ॥ २९

इस संसारमें देव, दानव, पशु-पक्षी तथा मनुष्य विचरण करते हैं. तदुपरान्त मत्स्य, कच्छप जैसे जलचर, वनस्पतियाँ एवं जीव-जन्तु भी (अनेक योनियोंमें) घूम रहे हैं.

ग्याननी इहां गम नहीं, सबद न पामे सेर ।
ग्यान दीवो तिहां सुं करे, ब्रह्मांड आखो अंधेर ॥ ३०

लौकिकज्ञान (अपराविद्या) परमतत्त्व तक न पहुँचनेके कारण इसके शब्द

इस विषयमें स्पष्ट मार्ग-दर्शन नहीं कर सकते. वस्तुतः दीपकके समान कर्मकाण्डका ज्ञान क्या कर सकता है जब कि सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड ही अज्ञानान्धकारसे भरा हुआ है.

कोहेडो काली रातनो, एमां पग न काढे कोय ।
अनेक करे अटकलो, पण बंध न छूटे तोय ॥ ३१

काली रात्रिके घोर अन्धकारके समान इस मायावी संसारमें अज्ञानरूपी अन्धकार फैला हुआ है. कोई भी इस अन्धकारमें पाँव नहीं भर सकता अर्थात् भवसागरका कोई पार नहीं पा सकता हैं. अनेक लोग परमात्माके विषयमें कल्पना तो करते हैं किन्तु मायाकी गुत्थी सुलझ नहीं रही है.

तिमर घोर अंधेर काली, अने अंधेरनो नहीं पार ।
मोह लगे मोहजल भर्युं, असत ने आसाधार ॥ ३२

यह संसार गहन अन्धकारसे भरी हुई काली रात्रिके समान है. इसका कोई अन्त नहीं है. मोहतत्त्व (उत्पत्तिस्थान) तक तो मोह जल ही भरा हुआ है, जो असाधारण रूपसे असत्य एवं अज्ञानसे परिपूर्ण है.

पांचे ते उतपन मोहनी, अने मोह तो अगम अपार ।
नेत नेत कही निगम वलिया, आगल सुध न पडी निराकार ॥ ३३

इन पाँचों तत्त्वोंकी उत्पत्ति मोह तत्त्वसे हुई है. सांसारिक जीवोंके लिए मोह भी अगम्य और असीम है. इसका पार न पाने पर नेति नेति कह कर वेद भी पीछे हट गए, क्योंकि निराकार (घोर अन्धकार) के कारण वे आगे कुछ समझ नहीं पाए.

एमा पग पंथ ज जोवंतां, बंध पड्यां ते जाण सुजाण ।
अनेक वचन विचार कही, नेठ लेवाणां निरवाण ॥ ३४

इस संसारसे छुटकारा पानेके लिए लोगों द्वारा अपनाए गए अनेक मार्ग दिखाई देते हैं. जिन्हें देखकर बड़े-बड़े ज्ञानी भी बन्धनमें आ गए (भ्रमित हो गए). अनेक प्रकारके वचनों पर विचार करते-करते वे वास्तवमें संसारमें ही लीन हो गए.

एमां जेम जेम जोई जोई जोइए, तेम तेम बंध पडतां जाय ।
अनेक उपाय जो कीजिए, प्रकास केमे नव थाय ॥ ३५

यहाँ पर प्रचलित मार्गों (सम्प्रदायों) को जैसे-जैसे देखते जाते हैं वैसे-वैसे उनके बन्धनमें फँसते चले जाते हैं. उनसे मुक्त होनेके लिए अनेक उपाय करने पर भी आत्म-ज्ञानका प्रकाश किसी प्रकारसे प्राप्त नहीं होता.

अनेक बुध इहां आछटी, अनेक फरवयां मन ।
अनेक क्रोधी काल क्रांत थईने, भाज्या ते हाथ रतन ॥ ३६

असंख्य ज्ञानी व्यक्ति यहाँ आकर मार (पछाड़) खा गए. कई लोगोंने अपने मनको (एकाग्र कर) संसारसे हटानेके लिए प्रयत्न भी किया. अनेक लोगोंने क्रोधके आवेशमें आकर हाथमें आए हुए मनुष्य जीवनरूपी रत्नको कालके वशीभूत हो कर खो दिया.

किहां थकी अमे आवियां, अने पड्यां ते अंधेर मांहे ।
जीवन जोत अलगी थई, मांहेंथी न केमे निसराए ॥ ३७

हम कहाँसे आए हैं ? और किस प्रकार इस अज्ञानरूपी घोर अन्धकारमें फँस गए हैं ? (हम इसे जानते नहीं हैं) परमात्माका प्रकाश प्राप्त करना तो दूर रहा, स्वयं अपनी जीवन-ज्योति (अक्षरब्रह्म) को भी न जान सके. इसलिए इस संसारसे किसी भी प्रकार पार नहीं हो सकते.

ए मंडल धणी त्रैगुण कहावे, जाणुं इहांथी टलसे अंधेर ।
पार वाणी बोले अटकले, तेणे उतरे नहीं फेर ॥ ३८

कई लोगोंकी यह धारणा रही है कि इस संसारके स्वामी ब्रह्मा, विष्णु तथा महादेवका भजन करने पर हृदयका अन्धकार दूर हो जाएगा तथा मुक्ति मिलेगी. ऐसे लोग पारकी वाणी अर्थात् परमात्मासे सम्बन्धित बातें तो अनुमानसे ही करते रहते हैं. इसके कारण वे आवागमनके चक्रसे मुक्त नहीं हो पाते.

एनो बार उघाडी पाधरुं, चाली न सके कोय ।
ब्रह्मांडना जे धणी कहावे, ते बांध्या रामत जोय ॥ ३९

इस ब्रह्माण्डसे बाहर निकलनेका द्वार खोलकर, कोई भी सीधा नहीं चल

पाया है. इस ब्रह्माण्डके अधिपति कहलाने वाले त्रिदेव भी इस खेलको देखते-देखते उसीमें बँध गए हैं.

बीजा फरे छे फेरमां, एने फेर नहीं लगार ।
पण बांध्या बंध जे खरी गांठे, आव्या ते मांहें अंधार ॥ ४०

अन्य सब संसारी जीव (जीवसृष्टि) ब्रह्मज्ञानके अभावके कारण त्रिदेवोंकी उपासनामें लगकर आवागमनके चक्रमें गतिमान हैं, किन्तु इन त्रिदेवोंके लिए जन्म-मरणका चक्र नहीं होता. अक्षरब्रह्मने संसारकी रचना करते समय जो नियम (बन्धन, गाँठ) बनाए थे उनमें वे बँधे हुए रहते हैं, जिसके कारण उन्हें मायाके अन्धकारमें आना पड़ता है अर्थात् जब-जब सृष्टिका निर्माण होता है तब-तब उन्हें मायामें आना पड़ता है.

ए जेणे बांध्यां तेणे छूटे, तिहां लगे न आवे पार ।
पार सुध पामे नहीं, कोई कोहेडो अंधार ॥ ४१

संसारका यह बन्धन (गाँठ) जिस (अक्षरब्रह्म) के द्वारा बाँधा गया है, उसीके द्वारा ही वह छूट सकता है, अन्यथा तब तक उनको मुक्ति (पार) नहीं मिलती. जब तक पार (परमधाम) का रहस्य स्पष्ट नहीं होता तब तक यह संसार गहन अन्धकारके समान ही लगता है.

बुध विना इहां बंधाई, पडिया ते सहु फंद मांहे ।
ए वचन सुणी करी, एणे समे ते ग्रही मारी बांहे ॥ ४२

बुद्धजी (जो अखण्ड ज्ञान एवं बुद्धिके दाता हैं) के बिना संसारके प्राणी इस मायाके बन्धनोंमें बँधे हुए फँस रहे हैं. इस प्रकारके वचन सुन कर धामधनीने उसी समय मेरा हाथ पकड़ लिया.

बांहे ग्रही बेठी करी, आवेस दीधो अंग ।
ते दिनथी दया पसरी, पल पल चढते रंग ॥ ४३

इस पूरे प्रसङ्गको अपने ऊपर लेती हुई इन्द्रावती कहती है-सद्गुरु धनीने इस प्रकार मेरे हाथ पकड़ कर मुझे बैठाया और मेरे अङ्गमें आवेश-बल दिया. उस दिनसे धनीजीकी दया मुझ पर बढ़ती गई और प्रतिक्षण प्रेमका रङ्ग मुझ पर चढ़ता गया.

ओलखी इन्द्रावती, वाले प्रगट कह्युं मारुं नाम ।
आ भोम भरम भाजी करी, देखाड्यां घर श्री धाम ॥ ४४

सद्‌गुरुने मुझे पहचान कर मेरा नाम इन्द्रावती कहा. उन्होंने इस मायावी भूमिके भ्रमको दूर कर परमधामका प्रत्यक्ष दर्शन भी कराया.

घर देखाडी जगवी, आप आवी आ वार ।
कर ग्रहीने कंठ लगाडी, त्यारे हुं उठी निरधार ॥ ४५

मूल घर–अखण्ड परमधामको दिखा कर सद्‌गुरु धनीने मेरी आत्माको जागृत किया तथा इस जागनीके ब्रह्माण्डमें आकर, हाथ पकड़ कर मुझे गलेसे लगा लिया. तब मैं (इन्द्रावती) निश्चित रूपसे जागृत होकर खड़ी हो गई.

भोम भली खेडी करी, जल सींचियुं आधार ।
वली बीज मांहें वावियुं, सुणो सणगानो प्रकार ॥ ४६

मेरी हृदयरूपी भूमिको उपदेश (ज्ञान) रूपी हलसे जोत कर धामधनीने प्रेमजलसे सिंचन किया. इसके बाद उसमें तारतम ज्ञानरूपी बीज बो दिया. अब उस अङ्कुरकी बात सुनिए.

अंधेर भागी असत उड्युं, उपनुं तत्त्व तेज ।
जनम जोत एवी थई, जे सूझे रेजारेज ॥ ४७

उस अङ्कुरके प्रभावसे अज्ञानका अन्धकार विनष्ट हो गया और असत्य दूर हुआ एवं मूल (ब्रह्म) तत्त्वका तेज मुझमें उदय हुआ. तारतमज्ञान (ब्रह्मज्ञान) की वह ज्योति देदीप्यमान हो उठी. जिससे मुझे पातालसे परमधाम तक सब कुछ दृष्टिगोचर होने लगा.

कमाड छाड्यां कोहेडे, उघाड्यां सरव बार ।
रामत थै सरव पाधरी, ए अजवालुं अपार ॥ ४८

इस ब्रह्मज्ञानने अज्ञानरूपी अन्धकारका आवरण दूर कर यहाँसे परमधाम तकके सभी द्वार खोल दिए. परिणाम स्वरूप संसारके खेलका रहस्य स्पष्ट हो गया. वस्तुतः तारतम ज्ञानका प्रकाश असीम है.

सणगो उठ्यो ते सतनो, असत भागी अंधेर ।
आपोपुं में ओलख्युं, भाग्यो ते अवलो फेर ॥ ४९

सत्य वस्तु (अखण्ड परमधाम) का अङ्कुर मेरे अन्तःकरणमें प्रस्फुटित हुआ. इसलिए असत्य और अन्धकार मेरे हृदयसे दूर हो गए. मैंने अपने आपको पहचान लिया, जिसके कारण सांसारिक गुत्थियाँ सुलझ गईं.

वाले ओलखीने आप मोसुं, कीधुं ते सगपण सत ।
सनकुल द्रष्टे हुं समजी, आ जाण्युं जोपे असत ॥ ५०

सद्‌गुरु धनीने मुझे पहचाना और परमात्माके साथके मेरे अखण्ड सम्बन्धको स्पष्ट कर दिया. उनकी कृपादृष्टिसे मैंने संसारकी असत्यताको ठीकसे समझा.

सनंध सरवे कही करी, ओलखाव्यां एंधाण ।
हवे प्रगट थै हुं पाधरी, मारी सगाई प्रमाण ॥ ५१

मूल सम्बन्धकी सभी बातें कह कर मूलघर–परमधामके प्रत्येक चिह्न (पच्चीस पक्ष आदि) की पहचान करवाई. इसलिए अब मैं अपने सम्बन्धके अनुरूप स्पष्ट रूपसे प्रकट हो गई हूँ.

हवे साथ मारो खोली काढुं, जे भली गयो रामत मांहे ।
प्रकास पूरण अम कने, हवे छपी न सके कांहे ॥ ५२

अब मैं मायामें भ्रमित होकर खोए हुए अपने मूल सम्बन्धी सुन्दरसाथको ढूँढ़ कर इससे बाहर निकालूँगी. क्योंकि अब मेरे पास अखण्ड तारतम ज्ञानका पूर्ण प्रकाश है. यह ज्ञानका प्रकाश अब कहीं भी छिपा नहीं रह सकता.

ओलखी साथ भेलो करुं, द्रढ करी दऊं मन ।
रामत देखाडी जगवुं, कही ते प्रगट वचन ॥ ५३

मैं सुन्दरसाथकी आत्माको पहचान कर उन्हें एकत्रित करूँगी और उनके मनमें दृढ़ विश्वास पैदा करूँगी. मायाका यह खेल दिखा कर तथा तारतमज्ञानके वचन प्रकट कर उन्हें जागृत कर दूँगी.

प्रकरण १ चौपाई ५३

आ रामतना तमने, प्रगट कहुं प्रकार ।
आ भोमना बंध छोडी दऊं, जेम जुओ जोपे करार ॥ १

इन्द्रावती कहती है, हे सुन्दरसाथजी ! मैं इस खेलके विषयमें आप सबको स्पष्ट रूपसे कह रही हूँ. इस भूमिके मायावी बन्धनोंको मैं हटा दूँगी ताकि तुम इसे अच्छी तरह शान्ति पूर्वक देख सको.

ए सुपनतणी जे रामत, रची ते अति अख्यात ।
मूल बुध विसरी गई, जाणे सुपन नहीं साख्यात ॥ २

यह स्वप्नवत् संसाररूपी खेलकी संरचना विचित्र ढंगसे की गई है. यहाँ तक कि इसमें आकर ब्रह्मात्माओंकी मूल बुद्धि भी भ्रमित हो गई हैं. अतः वे भी इस मायावी खेलको ही सत्य मान बैठीं हैं.

पूरुं मनोरथ तमतणां, उघाडुं रामतनां बार ।
रामत देखाडी करी, करुं सतनो विस्तार ॥ ३

हे सुन्दरसाथजी ! आपकी इच्छाओंको पूर्ण करनेकी मेरी अभिलाषा है. इसलिए संसारके इस खेलका स्पष्टीकरण कर दूँ. स्वप्नवत् असत्य संसारका खेल दिखा कर, आपको अखण्ड घर परमधामकी सत् वस्तुका प्रकाश विस्तार पूर्वक दिखा दूँ.

अरध साथ रह्यो अटकी, जेणे जोयानो हरख अपार ।
स्वांग देखाडी विधविधनां, पछे दऊं ते सतनो सार ॥ ४

आधे सुन्दरसाथ (तामसी सखियों) को व्रज तथा रासके दुःखोंका अनुभव न होनेके कारण, दुःखरूपी संसारका खेल देखनेकी उत्कण्ठा मनमें रह गई. इसलिए विभिन्न प्रकारसे ये खेल दिखा कर फिर सत्का सार (व्रज, रास, अखण्ड परमधाम तथा धामधनी) दिखा दूँ.

वात सुणो मारा वालैया, साथे दीठां ते दुख संसार ।
केम थाय साथ माहु मारो, जिहां ऊभी इन्द्रावती नार ॥ ५

हे मेरे प्यारे सद्गुरु ! मेरी बात सुनिए, सुन्दरसाथने संसारमें अत्यधिक दुःख

देख लिए हैं. अब इन्द्रावती जैसी सखीके यहाँ होते हुए मेरे सुन्दरसाथको कैसे दुःख पहुँचेगा ?

तमे वांकी ते वाटे चलविया, विसमां ते केम चलाय ।
हुं ग्रही दऊं धाम धणी, तो सुख मुने थाय ॥ ६

हे सुन्दरसाथजी ! तुम मायाके उलटे मार्ग पर चल रहे हो. ऐसे विषम मार्ग पर कैसे चला जाए ? मैं तुम्हें धामधनीका साथ (हाथ) ग्रहण करा देती हूँ तभी मुझे आनन्द होगा.

हवे जागी जुओ मारा साथजी, रामत छे ब्रह्मांड ।
जोपे जुओ नेहे चितसुं, मध्य भरथजीने खंड ॥ ७

हे मेरे सुन्दरसाथजी ! अब तुम जागृत होकर देखो. यह ब्रह्माण्ड मायावी खेलका केन्द्र है. इसमें भी तुम भरत खण्ड में आए हो इसलिए एकाग्र चित्त होकर इसे प्रेमसे देखो.

जिहां वाविए व्रख उपजे, जेनो फल वांछे सहु कोय ।
बीज जेवुं फल तेवुं, करत कमाई जोय ॥ ८

यहाँ (भरतखण्डमें) भक्तिका बीज बोने पर धर्मरूपी वृक्ष उगता है. उसके मुक्तिरूपी फलको प्राप्त करनेकी इच्छा सभी करते हैं. जैसा बीज है वैसा ही फल होता है. इस प्रकार यहाँ पर सब लोग अच्छे और बुरे कर्मोंकी कमाई करते हैं.

भोम भली भरथ खंडनी, जिहां निपजे निध निरमल ।
बीजी सरवे भोम खारी, खारा ते जल मोहजल ॥ ९

भरत खण्डकी भूमि अति उत्तम है. यहीं पर निर्मल निधि – पवित्र सम्पत्ति (तारतम ज्ञान) प्रकट हुई है. इस भरत खण्डके अतिरिक्त अन्य सब धरती खारी है अर्थात् भक्ति विहीन है, और यह मोहजल भी खारा (भक्ति विहीन) है.

ए मधे जे पुरी कहावे, नौतन जेहनुं नाम ।
उतम चौद भवनमां, जिहां वालानो विश्राम ॥ १०

इस समग्र भरत खण्डमें जो पुरी कहलाती है उसका नाम नवतनपुरी धाम

है. वह चौदह लोकोंमें सर्वश्रेष्ठ है, क्योंकि धामधनीका यह विश्राम स्थल है.

रामत घणी रलियामणी, तमे मांगी मन करी खंत ।
विध सरवे कहुं तमने, जोपे जुओ नेहचित ॥ ११

यहाँ पर बहुत ही मनमोहक एवं सुन्दर खेल हुए हैं जिनको देखनेके लिए तुम सब (सुन्दरसाथ) ने उत्साह पूर्वक माँग की थी. इसलिए यहाँके सम्पूर्ण वृत्तान्त तुम्हारे समक्ष कह रही हूँ ताकि तुम निश्चिन्त होकर उनको ठीकसे देख सको.

रामत जोइएजी, जोवा आव्या छुं जेह ।
मांगी आपण धणी कने, आ देखाडे छे तेह ॥ १२

हे सुन्दरसाथजी ! मायावी संसारका यह खेल देखो. जिसको देखनेके लिए ही हम सब यहाँ पर आए हैं. क्योंकि हमने धामधनीसे इसीकी माँग की थी. धामधनी हमें वही खेल दिखा रहे हैं.

मोहोरा ते दीसे सहु जुजवा, अने जुजवी मुखवाण ।
स्वांग काछे सहु जुजवा, जाणे दीसंतां प्रमाण ॥ १३

इस संसारमें मत-मतान्तर, पंथ, सम्प्रदाय एवं अलग-अलग प्रकारके लोग दिखाई देते हैं और उनकी बोली भी अलग-अलग है. वे अपनी-अपनी वेश-भूषाको अलग-अलग ढङ्गसे बनाते हैं. बाह्यदृष्टिसे ये सब प्रमाणित (सत्य) दीखते हैं.

विध विधनां वेष लावे, जाणे रामत निरवाण ।
ब्राह्मण खत्री वैस सूद्र, मली ते राणे राण ॥ १४

यहाँके लोग अलग-अलग प्रकारके वेश धारण कर लेते हैं और समझते हैं कि यह खेल स्थायी है. ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चारों वर्णके लोग तथा राजा-महाराजा आदि सब इस खेलमें निमग्न हैं.

मांहों मांहें सगा समंधी, मांहें कुटुम्बनो वहेवार ।
हंसे हरखे रुए सोके, चौद विद्या वरण चार ॥ १५

यहाँ परस्पर सभी सम्बन्धी हैं और एक परिवारकी भाँति ही व्यवहार करते

हैं. कोई आनन्दसे हँसते हैं तो कोई कभी शोकमें रोते हैं, दुःखी होते हैं. चौद विद्याओंमें निपुण संसारके चारों वर्णके लोगोंकी ऐसी ही स्थिति है.

अढारे वरण एणी विधे, लोभे लाग्या करे उपाय ।
विना अगनी पर जले, अंग काम क्रोध न माय ॥ १६

इसी प्रकार अठारह वर्णके लोगोंकी भी यही गति-विधि है. ये सब लोभके वशीभूत होकर स्वार्थ पूर्तिके उपाय करते हैं. अग्निके बिना ही उन लोगोंके पंख जल रहे हैं, अंग-प्रत्यंगोंमें काम- क्रोध नहीं समा रहा है.

अनेक सहेर बजार चौटा, चोक चोवटा अनेक ।
अनेक कसबी कसब करतां, हाट पीठ वसेक ॥ १७

यहाँ पर अनेक प्रकारके शहर, बाजार तथा चौक भी हैं. चौक तथा बाजारोंसे निकलने वाले अनेक मार्ग हैं. अनेकों व्यापारी यहाँ व्यापार करते हैं एवं साप्ताहिक (हाट) तथा वार्षिक (पीठ) मेलोंका आयोजन भी होता है.

स्वांग सरवे सोभावीने, करे हो हो कार ।
कोई मांहें आहार खाधा, कोई खाधा अहंकार ॥ १८

इस तरह अनेक प्रकारका आडम्बर रच कर बहुत-से लोग यों ही प्रलाप करते हैं. उनमेंसे कोई तो मायाको ही अपना आहार बनाते हैं तो कोई अहंकारको अपना आहार बना लेते हैं.

कोई मांहे वहेवारियां, कोई राणा राय ।
कोई मांहें रांक रोवतां, ए रामत एम रमाय ॥ १९

कोई सांसारिक व्यवहारमें कुशल हैं अर्थात् सेठ साहुकार बन कर लेन-देनके व्यवहारमें ही लिप्त रहते हैं . कोई राजा-महाराजा बने बैठे हैं. कोई गरीब होकर रोते हुए घूमते हैं. यह सांसारिक खेल इस प्रकार चल रहा है.

कोई पोढे पलंग कनकने, कोई उपर ढोले वाय ।
वातो करतां जी जी करे, ए रामत एम सोभाय ॥ २०

यहाँ पर कोई सोनेके पलंग पर शयन करते हैं और कोई लोगोंकी सेवा

शुश्रूषा में पंखे झुलाते रहते हैं. ऐसे लोगोंके साथ बातें करते समय सेवक गण नम्रता पूर्वक जी-हजूरी किया करते हैं. यहाँ मायावी खेल इसी प्रकार सुशोभित है.

कोई बेसे पालखी, कोई उपाडी उजाय ।
कोई करे छत्र छाया, रामत एम ज थाय ॥ २१

यदि कुछ लोग पालकीमें बैठते हैं तो कुछ उस पालकीको उठाकर दौड़ते हैं. कोई लोग (धनवानों, राजा, महाराजाओं और दुल्हों पर) छत्र लिए खड़े रहते हैं. इस प्रकार यह खेल चल रहा है.

मांहो मांहें सनमंध करतां, उछरंग अंग न माय ।
अबीर गुलाल उडाडतां, सहेरोमां फेरा खाय ॥ २२

ऐसे लोग परस्पर वैवाहिक-सम्बन्ध भी स्थापित करते हैं, जो उनके आनन्दको असीम कर देता है. अबीर, गुलालका छिड़काव करते हुए शहरके बीचसे वर-यात्रा निकालते हैं.

आभरण पहेरी अस्व चढे, कोई करे छाया छत्र ।
कोई नाटारंभ करे, कोई बजाडे वाजंत्र ॥ २३

कोई वस्त्राभूषण पहन कर घोड़े पर चढ़ता है. कोई उस पर छत्रछाया करता है. कई लोग उसके आगे नृत्य गान करते हैं तो कई बड़े-बड़े वाद्य-यन्त्र बजाते हैं.

कोई सीढी बांधी आवे सामा, करे ते पोक पुकार ।
व्रह वेदना अंग न माय, पीटे मांहें बजार ॥ २४

ऐसेमें कोई अरथी उठा कर सामनेसे निकलते हैं और दर्दभरी पुकार भी करते हैं. उनके अङ्गमें विरहकी वेदना समाती नहीं है और रोते-विलखते हुए भरे बाजारमें छाती पीटते हैं.

देहेन हाथे दिए पोते, रुदन करे जलधार ।
सगा समंधी सहु मली, टलवले नर नार ॥ २५

कोई अपने ही हाथोंसे अपने मृत स्वजनको दाह देते हैं और शोकसन्तप्त

होकर अश्रुधारा बहाते हुए रोते जाते हैं. इस प्रकार एकत्रित हुए स्त्री पुरुष अत्यन्त व्याकुल हो जाते हैं.

कोई मांहें जनम पामे, कोई पामे मरन ।
कोई मांहें हरखसुं, कोई सोक रूदन ॥ २६

इस संसारमें कहीं किसीका जन्म होता है तो उसी समय कहीं किसीकी मृत्यु भी होती है. इसलिए एक ओर कई लोग प्रसन्नतासे आनन्द मनाते हुए देखे जाते हैं तो दूसरी ओर कई शोकग्रस्त होकर रुदन करते दृष्टिगोचर होते हैं.

खरचे खाए अहंमेव, मांहोंमांहे मोटा थाय ।
दान करी कीरत कहावे, ए रामत एम रमाय ॥ २७

कई लोग गर्व और बड़प्पनमें धनका व्यर्थ व्यय करते हैं. देखा-देखीमें वे एक दूसरेसे बड़ा बनना चाहते हैं. कोई-कोई दान-पुण्य कर यश (कीर्ति) कमाते हैं. यह खेल इस प्रकार चलता रहता है.

कोई किरपी कोई दाता, कोई जाचक कहेवाय ।
कोईना अवगुण बोले, कोईना गुण गाय ॥ २८

यहाँ पर कोई कृपण, कोई दानी तो कोई भिक्षुक कहलाते हैं. साधरणतः कुछ लोग दान देने वालोंका गुणगान करते हैं और न देने वालेकी निन्दा करते हैं.

कोई चढी चकडोल बेसे, आगल तुरी गज पायदल ।
विधविधनां वाजंत्र बाजे, जाणे राज नेहचल ॥ २९

कोई राजा-महाराजा सिंहासन पर बैठ कर अपनी सवारी निकालते हैं. उनके आगे घोड़े, हाथी और पैदल चलनेवाले सिपाही रहते हैं. उस समय विभिन्न प्रकारके बाजे बजाए जाते हैं. वे मनमें ऐसा समझते हैं कि मानों उनका राज्य अखण्ड है.

साम सामी करे सेन्या, भारथ करे लोह अंग ।
अहंकारे आकार पछाडे, नमे नहीं अभंग ॥ ३०

ये राजा-महाराजा कभी-कभी एक दूसरेके साथ संघर्ष होनेके कारण आमने-

सामने सेनाको खड़ा कर देते हैं. देहसे रक्त बहाते हुए लोहेकी तलवारोंसे युद्ध करते हैं. वे अभिमानवश शरीरको कष्ट देते हैं परन्तु किसी भी प्रकारसे झुकना नहीं चाहते.

कोई जीते कोई हारे, हरख सोक न माय ।
दिसा सरवे जीती आवे, ते प्रथीपत कहेवाय ॥ ३१

युद्धमें कोई विजय प्राप्त करता है तो कोई हार जाता है. जीतने वालोंको अति आनन्द होता है और हारने वाला अत्यन्त शोक सन्तप्त बन जाता है. जो दसों दिशाओंको जीत लेता है वह अपने आपको पृथ्वीपतिके रूपमें घोषित करता है.

कोई भर्‌या लई भाकसी, उथमे बंध बंधाय ।
मार माथे पडे मोहोकम, रामत एणी अदाय ॥ ३२

पृथ्वीपति बन जानेके बाद हारे हुए राजाओंको बन्दी बना कर जेलमें डाल देते हैं. किसीको उलटे सिर लटका कर रस्सीसे बाँध देते हैं और उनके मस्तक पर निर्दयता पूर्वक प्रहार करते हैं. संसारका यह मायावी खेल इस प्रकारका है.

जीत्या हरखे पौरसे, सूरातन अंग न माय ।
हारयां तिहां सोक पामे, करे मुख त्राहे त्राहे ॥ ३३

विजयी अपने पुरुषार्थसे खुश होते हैं. उनके अंगमें वीरताकी खुशी समाती नहीं है. हारनेवाला शोकग्रस्त होकर 'त्राहि माम् त्राहि माम्' (मेरी रक्षा करो, मुझे बचाओ) इस प्रकारकी पुकार करने लगता है.

कोई मांहें रोगिया, अने कोई मांहें अंध ।
कोई लूला कोई पांगला, रामत एह सनंध ॥ ३४

इस संसारमें कोई रोगग्रस्त हैं, कोई नेत्रहीन हैं, कोई लंगड़े हैं तो कोई अपंग (अशक्त) हैं. यह मायावी खेल ही ऐसा है.

कोई मांहें फकीर फरतां, उदम नहीं उपाय ।
उदर कारण कष्ट पामे, भीखे पेट न भराय ॥ ३५

कोई इस मायामें फकीर बन कर घूमते रहते हैं और कोई उद्यम (परिश्रम) नहीं करते. पेटके लिए वे कष्ट सहन करते हैं परन्तु वे यह नहीं समझते

कि भिक्षासे पेट कभी भी नहीं भरता. अर्थात् तृष्णा कभी भी शान्त नहीं होती.

प्रकरण २ चौपाई ८८

[श्रीप्राणनाथजीने उपर्युक्त प्रकरणमें प्रवृत्ति मार्ग वालोंके खेलका वर्णन किया है. अब वे निवृत्ति मार्ग वालोंके खेलका वर्णन कर रहे हैं.]

रामतमां वली रामत

ए रामत मांहें जे रामतो, तेनो न लाभे पार ।
ए वेषो मांहे वली वेष सोभे, स्वांग सहु संसार ॥ १

इस खेलके अन्दर अन्य छोटे-छोटे खेल भी होते हैं, उनका कोई पारावार नहीं है. यहाँ पर वेशधारियोंमें भी अन्य कई वेश शोभा देते हैं. इस प्रकार संसारमें वेश-भूषाका स्वांग अनेक प्रकारसे देखा जाता है.

कोई वेष जो साध कहावे, कोई चतुर सुजाण ।
कोई वेष जो दुष्ट कहावे, कोई मूरख अजाण ॥ २

कई वेशधारी लोग साधु कहलाते हैं तो कोई अपने आपको चतुर और ज्ञानी मानते हैं. कई लोग अपने वेशके कारण दुष्ट कहलाते हैं तथा कई मूर्ख एवं अज्ञानी कहलाते हैं.

अनेक पगथी परब परवाह, दया दान देवाय ।
देखाडुं सहु करी सागर, मांहेंना मांहें समाय ॥ ३

अनेक लोग प्रजाकी सुविधाके लिए घाटों पर सीढ़ियाँ बनवाते हैं, पानीके प्याऊ बनवाते हैं और अन्नक्षेत्र भी खोलते हैं, दयालु बन कर दान-दक्षिणा भी देते हैं. हे सुन्दरसाथजी ! इस प्रकार इस संसारकी सभी परम्पराएँ विस्तृत रूपसे दिखा रही हूँ. वास्तवमें वे सब लोग भवसागरके भीतर ही समा जाते हैं.

अनेक देहरा अपासरा, मांहें मुनारा मसीत ।
तलाव कुवा कुंड वावरी, मांहें विसामां कै रीत ॥ ४

हिन्दू लोग अनेक मन्दिर तथा जैनलोग उपाश्रय बनवाते हैं. मुसलमान मीनारों तथा मस्जिदोंका निर्माण करते हैं. परमार्थ करने वाले लोग तालाब, कुएँ, कुण्ड तथा बावड़ी खुदवाते हैं. लम्बे मार्गमें विश्राम करनेके लिए बीच-बीचमें विश्रामगृह भी बनवाते हैं.

कै जुगते जगन करतां, कै जुगते उपचार ।
कै जुगते धरम पाले, पर हिरदे घोर अंधार ॥ ५

कई लोग युक्तिपूर्वक यज्ञ करते हैं. कई परोपकार करते हैं. कई युक्तिपूर्वक धर्मपालनका ढोंग रचाते हैं. किन्तु उनके हृदयमें अज्ञानका घोर अन्धकार छाया हुआ रहता है.

कै जुगते सिध साधक, कै जुगते संन्यास ।
कै जुगते देह दमे, पण छूटे नहीं जमफांस ॥ ६

कई लोग युक्ति द्वारा अपना प्रभाव फैला कर स्वयंको सिद्ध साधक कहलवाते हैं. कई युक्तिपूर्वक संन्यास ग्रहण करते हैं. कई लोग अपनी इन्द्रियोंका दमन करते हैं. परन्तु इतना सब होने पर भी अहंकारके कारण वे यमराजके फन्देसे नहीं छूटते.

कै जुगते वेराग वरते, कै जोग पाले सिध ।
मठवाले पिंड पाले, पण नहीं परमनी निध ॥ ७

कुछ लोग वैरागी बनते हैं. कई लोग योग साधना द्वारा सिद्धि प्राप्त करते हैं. कई मठाधीश बन कर अपनी देहका पालन करते हैं परन्तु परमपदकी निधि उनके पास नहीं होती है.

आपने नव ओलखे, नव ओलखे परमेस्वर ।
तो पार ते केम पामे, जिहां सुध न पोते घर ॥ ८

ऐसे लोग स्वयंको नहीं पहचानते हैं तथा परमात्माको भी नहीं पहचानते. इसलिए परमतत्त्व (पार) को वे कैसे प्राप्त कर सकते जब उन्हें स्वयं तथा अपने मूल घरकी ही सुधि नहीं है.

षटचक्र नाडी पवन, साधे अजपा अनहद ।
कै त्रवेनी त्रकूटी, जोती सोहं राते सबद ॥ ९

कुछ योगाभ्यासी शरीरके छः चक्रों (षटचक्रों) की साधना कर श्वासको ब्रह्मरन्ध्रमें रोक कर मन्त्रका अजपा जाप करके उससे अनहद नाद सुननेका प्रयास करते हैं. कोई त्रिवेणी त्रिकुटी (ईडा, पिंगला तथा सुषुम्ना नाड़ी) की साधना कर ज्योति स्वरूपके दर्शन करके पुरुषार्थ करते हैं और सोऽहं शब्दका जप कर उसीमें मग्न रहते हैं.

कोई षटदरसनी कहावे, धरे ते जुजवा वेष ।
पारब्रह्मने पामे नहीं, रुदे अंधेरी वसेष ॥ १०

कई लोग तो छह शास्त्रोंके ज्ञाता (षट्दर्शनी) कहलाते हैं, वे अलग-अलग प्रकारके वेश धारण करते हैं, परन्तु परब्रह्म परमात्माको प्राप्त नहीं कर सकते क्योंकि उनके हृदयमें अहंकाररूपी अन्धकार व्याप्त होता है.

श्रीपात पंडित ब्रह्मचारी, भट वेदिया वेदांत ।
पुराण जोई जोई सरवे पढिया, परमहंस सिधांत ॥ ११

कई लोग बड़े-बड़े धुरन्धर विद्वान, श्रीपाद, पण्डित तथा ब्रह्मचारीके वेशमें रहते हैं. वेदपाठी, वेदान्ती भट्टजी कहलाते हैं. पुराणोंको पढ़ कर कुछ लोग पण्डित - प्रवीण कहलाते हैं और कई सैद्धान्तिक परमहंस बन जाते हैं.

अलप आहारी निद्रा निवारी, सबद सत विचारी ।
आचारी ने नेम धारी, पण मूके नहीं अंधारी ॥ १२

कई अल्प आहार करते हैं, निद्रा पर विजय प्राप्त कर लेते हैं और सत्य शब्द (ज्ञान) पर विचार करते रहते हैं. कई यम, नियमका पालन कर सदाचारी तथा संयमी कहलाते हैं. किन्तु उनका अहंकाररूपी अन्धकार दूर नहीं होता.

संत महंत अनेक मुनिवर, देखीतां डिगंमर ।
जाय सहुए प्रघल पूरे, कापडी कलंदर ॥ १३

इस संसारमें कई सन्त, महन्त तथा मुनियोंमें श्रेष्ठ मुनीश्वर हैं, कई दिगम्बर दिखाई देते हैं किन्तु वे भी सब मायाके प्रबल प्रवाहमें बहते रहते हैं. यही स्थिति कापड़ी एवं कलंदर आदि श्रेणियोंके वेश धारियोंकी भी है.

सीलवंती सती कहावे, आरजा अरधांग ।
जती बरती पोसांगरी, ए अति सोभावे स्वांग ॥ १४

कई स्त्रियाँ शीलवती तथा सती कहलातीं हैं. कई आर्या और अर्धांगिनी बनी हुईं हैं. कुछ लोग यति, व्रती एवं पोसांगरी वेश वाले हैं. ये सब आडम्बरपूर्ण अत्यन्त सुन्दर वेश धारण किए हुए हैं.

मलक मुल्लां मलंग जिंदा, बांग दे मन धीर ।
पाक थै थै सहुए पढिया, मीर पीर फकीर ॥ १५

कई लोग, मलक–फरिश्ता होनेका तो कई मुल्ला तथा मुस्लिम फकीर होनेका अधिकार जताते हैं. कोई मनको स्थिर करके बाँग देते हैं और कई मीर (धर्माचार्य),पीर (गुरु), फकीर (साधु) आदि सबके सब पाक (पवित्र) होकर कुरानादि पढ़ते हैं.

कै करामत कोटल, ओलिया आलम ।
बोदला बेकेद सोफी, जाणी करे जुलम ॥ १६

कई लोग कुटिल चमत्कार दिखाते हैं और कुछ लोग अपने आपको औलिया (खुदाके दोस्त) अथवा आलिम (प्रशिक्षित) समझते हैं. कई लोग बोदला, बेकैद (बन्धन रहित) एवं सूफी वेश धारण करके जान बूझ कर अपने आप पर अत्याचार करते हैं.

अनेक मांहें धरम पाले, पंथ प्रगट थाय ।
आंधला जेम संग चाले, ए पाखंड एम रचाय ॥ १७

इस संसारमें अनेक लोग धर्मका पालन करते हैं. कुछ लोग अपना नया ही पन्थ चलाते हैं. कुछ लोग उनका अन्धानुकरण करने लगते हैं. संसारका खेल कुछ ऐसे ही दम्भ और पाखण्डसे भरा पड़ा है.

रमे मांहोंमांहे रबदे, करे परसपर क्रोध ।
मछ गलागल मांहें सघले, मूके नहीं कोई ब्रोध ॥ १८

कई लोग यहाँ पर खेलते हुए परस्पर वाद–विवाद कर क्रुद्ध होते हैं. जिस प्रकार सागरमें बड़ी मछली छोटी मछलीको निगलती है उसी प्रकार यहाँ बड़े लोग छोटोंको दबाते हैं, इसलिए आपसमें ईर्ष्या और द्वेष नहीं छोड़ते.

प्रकरण ३ चौपाई १०६

कोई कहे दान मोटुं, कोई कहे ग्यान ।
कोई कहे विग्यान मोटुं, एम वदे सहु उनमान ॥ १

प्रत्येक सम्प्रदायके लोग अपनी-अपनी धारणाको सत्य मानते हैं. उदाहरणार्थ - कोई कहता है कि दान करना ही सर्वोत्तम है, जब कि दूसरा ज्ञानको सर्वोत्तम मानता है. कोई कहते हैं कि विज्ञानकी जानकारी ही सर्वश्रेष्ठ है. इस प्रकार वे सब अटकलें लगाते हैं.

कोई कहे करम मोटुं, कोई कहे मोटो काल ।
कोई कहे अगम मोटुं, एम रमे सहु पंपाल ॥ २

षट्शास्त्रके ज्ञाताओंमेंसे किसी (मीमांसा मत वालों) की मान्यता है कि कर्म ही सबसे बड़ा है. जब कि (वैशषिक मत वाले) काल (समय) को बड़ा मानते हैं. कई लोग अगमको बड़ा बताते हैं. इस प्रकार सब झूठे भ्रममें भटक रहे हैं.

कोई कहे तीरथ मोटुं, कोई कहे मोटुं तप ।
कोई कहे सील मोटुं, कोई कहे मोटुं सत ॥ ३

कोई कहता है कि तीर्थ ही बड़ा है तो कई तपको प्रधान मानते हैं. कुछ लोग शील-सन्तोषकी विशेषता बताते हैं जब कि कोई सत्यको ही सबसे बड़ा मानते हैं.

कोई कहे विचार मोटो, कोई कहे मोटुं व्रत ।
कोई कहे मत मोटी, एम वदे कै जुगत ॥ ४

कोई शुद्ध विचारधाराको बड़ा मानते हैं तो कोई व्रतको सर्वोपरी मानते हैं. कोई सद्बुद्धिको अति उत्तम मानते हैं. इस प्रकार युक्ति-प्रयुक्तियोंके द्वारा अपना-अपना मत प्रस्तुत करते हैं.

कोई कहे करणी मोटी, कोई कहे मुगत ।
कोई कहे भाव मोटो, कोई कहे भगत ॥ ५

कोई करणी (शुद्ध कर्म) को प्रधानता देते हैं. तो कोई मुक्तिको मुख्य कहते

हैं. कोई भावको बड़ा मानते हैं तो कोई भक्तिको श्रेष्ठ मानते हैं.

कोई कहे कीरतन मोटुं, कोई कहे श्रवन ।
कोई कहे वंदनी मोटी, कोई कहे अरचन ॥ ६

भक्तिमें भी कई लोग कीर्तन भक्तिको श्रेष्ठ मानते हैं तो कितने लोग श्रवण भक्तिको, कोई वन्दनको उच्च मानते हैं तो कोई अर्चनको प्रधान कहते हैं.

कोई कहे ध्यान मोटुं, कोई कहे धारण ।
कोई कहे सेवा मोटी, कोई कहे अरपण ॥ ७

कोई ध्यानकी प्रधानता बताते हैं तो कोई धारणाकी, कोई सेवा (शुश्रूषा) तथा परोपकारको उत्तम मानते हैं तो कोई समर्पण भावको श्रेष्ठ मानते हैं.

कोई कहे स्वांत मोटी, कोई कहे मोटो पण ।
रमे सहुए निद्रा मांहें, रुदे अंधारुं अति घण ॥ ८

कई लोग सन्तोष (स्वांत) को सर्वश्रेष्ठ मानते हैं तो कई लोग प्रण (संकल्प) को ऊँचा मानते हैं. ये सब इस प्रकार अज्ञानरूपी निद्रामें भटक रहे हैं क्योंकि उनके हृदयमें अज्ञानताका अन्धकार छाया हुआ है.

कोई कहावे अप्रस अंगे, कोई कहे निवेदन ।
कोई कहे अमे नेम धारी, पण मूके नहीं मेल मन ॥ ९

कुछ लोग कहते हैं कि अस्पर्श-व्रत ही श्रेष्ठतम है. जब अन्य कई लोग निवेदन (प्रत्येक वस्तु परमात्माको अर्पण) करना मुख्य मानते हैं. कोई कहते हैं कि हम तो नियमधारी हैं, किन्तु वे भी मनकी मलिनताको नहीं छोड़ते.

कोई कहे सत संगत मोटी, कोई कहे मोटो दास ।
कोई कहे विवेक मोटो, कोई कहे विस्वास ॥ १०

कुछ लोग सत्संगकी प्रधानता बताते हैं. कुछ लोग परमात्माके प्रति दास्यभाव रखनेको कहते हैं तथा कई विवेकको उत्तम समझते हैं तो कई लोग विश्वासको ही सर्वोपरी मानते हैं.

कोई कहे सदासिव मोटो, कोई कहे आदनारायण ।
कोई कहे आदिसक्ति मोटी, एम करे ताणोताण ॥ ११

कुछ लोग कहते हैं कि भगवान सदाशिव सबसे बड़े हैं. वहीं कई लोग कहते हैं कि आदिनारायण ही मुख्य हैं. किसी की मान्यता है कि आद्यशक्ति ही सर्वश्रेष्ठ है. इस प्रकार सब परस्पर विवादमें फँसकर देवताओंकी मान्यताके प्रति खींचातानी करते हैं.

कोई कहे आतम मोटी, कोई कहे परआतम ।
कोई कहे अहंकार मोटो, जे आदनो उतपन ॥ १२

कोई कहता है कि आत्मा ही सर्वश्रेष्ठ है, जब कि कई परात्माको श्रेष्ठ मानते हैं. कुछेक तो अहंकारको प्रधानतम समझते हैं, क्योंकि सृष्टिमें यह सबसे पहले उत्पन्न हुआ है.

कोई कहे सकल व्यापी, दीसंतो सहु ब्रह्म ।
कोई कहे निरगुण न्यारो, आ दीसे छे सहु भरम ॥ १३

कुछ लोग परमात्माको सर्वव्यापी मानते हैं तथा सर्वत्र ब्रह्मके ही दर्शन करते हैं. कई लोग ब्रह्मको इन सब वस्तुओंसे परे निर्गुण निराकार मानते हैं. इस प्रकार चारों ओर भ्रान्तियाँ दिखाई दे रहीं हैं.

कोई कहे सुन मोटुं, कोई कहे निरंजन ।
सार अरथ सूझे नहीं, पछे वादे बढे वचन ॥ १४

कोई शून्यको सर्वोपरि मानते हैं तो कोई निरंजन शक्तिको सर्वश्रेष्ठ मानते हैं. ऐसे लोग शास्त्रोंका वास्तविक अर्थ तो समझ नहीं पाते और वादविवादमें पड़ कर झगड़ते रहते हैं.

कोई कहे आकार मोटो, कोई कहे निराकार ।
कोई कहे मांहें जोत मोटी, एम वढे भरयां विकार ॥ १५

कोई साकार ब्रह्मको बड़ा मानते हैं तो कोई इस जगतकी नश्वरताको देखकर ब्रह्मको निराकार मानते हैं. कुछेकके मतानुसार अन्तःकी ज्योति (ज्योतिस्वरूप) ही सर्वोपरि है. इस प्रकार विकारी लोग परस्पर झगड़ते रहते हैं.

कोई कहे पारब्रह्म मोटो, कोई कहे परषोतम ।
वेदने वाद अंधकारे, वादे वढतां धरम ॥ १६

कुछ लोगोंकी ऐसी मान्यता है कि परब्रह्म परमात्मा ही सबसे बड़े हैं. कुछ लोग उन्हें पुरुषोत्तम कहते हैं. इस प्रकार ज्ञानके विवादमें पड़े हुए लोग अज्ञान रूपी अहंकारके कारण वाद–विवादके द्वारा धर्मकी वृद्धि समझते हैं.

प्रगट पंपाल दीसे रमतां, अति घणुं अंधेर ।
कहे अमे साचा तमे झूठा, एम फरे ते अवले फेर ॥ १७

ये सब लोग प्रत्यक्ष रूपसे झूठे खेल खेलते हुए दिखाई देते हैं, क्योंकि इनके हृदयमें प्रगाढ अन्धकार भरा हुआ है. वे स्वयंको सच्चा और दूसरोंको झूठा मानते हैं. इस प्रकार सब उलटे चक्करमें फँसे हुए हैं.

पंथ सहुना एह ज पैयां, जे वलगा मांहें वेराट ।
ए विध कही सहु विगते, ए रच्यो माया ठाट ॥ १८

प्रत्येक सम्प्रदायवालोंका यही मार्ग है. वे सब विराट (संसार) से चिपके हुए हैं. इस प्रकार वैराटका सम्भवित वृत्तान्त कह दिया है. इन सबकी रचना माया (प्रकृति) के द्वारा ही हुई है.

परपंचे सहु पंथ चाले, कहे लेसुं चरण निवास ।
ए रामतना जे जीव पोते, ते केम पामे साख्यात ॥ १९

सब धर्मावलम्बी प्रपञ्चके मार्ग पर ही चल रहे हैं और कहते हैं कि हम परमात्माके चरणोंमें निवास करेंगे. ये मायावी खेलके जीव साक्षात् परमात्माको कैसे प्राप्त कर सकेंगे ?

कोई भेरव कोई अगिन, कोई करवत ले ।
पारब्रह्मने पामे नहीं, जो तिल तिल कापे देह ॥ २०

कई लोग पर्वत (गिरनार) से कूद कर भैरव झाँप लगाते हैं, तो कोई पञ्चाग्निमें तप कर मुक्ति चाहते हैं. कई लोग काशीमें जाकर अपने मस्तक पर आरा चलवाते हैं. चाहे अपने शरीरको काट कर बारीक टुकड़े भी कर डालें फिर भी परब्रह्म परमात्माको पा नहीं सकते.

अनेक स्वांग रमे जुजवा, असत ने अप्रमाण ।
मूल विना जे पिंड पोते, ते केम पामे निरवाण ॥ २१

इस प्रकार लोग असत्य और अप्रामाणिक विभिन्न प्रकारके वेश धारण कर मायामें खेल रहे हैं. ऐसे मायासे उत्पन्न जीव (जीवका मूल ही माया है) अखण्ड (शाश्वत) मुक्ति कैसे प्राप्त कर पाएँगे ?

प्रकरण ४ चौपाई १२७

वैराटनी जाली

अनेक किव इहां उपजे, वेराट मुख वखाण ।
वचन कही मांहें थाय मोटा, पण पामे नहीं निरवाण ॥ १

इस संसारमें अनेक कविजन हुए हैं, जिन्होंने इस विराटकी मुक्त कण्ठसे प्रशंसा की है. वे विशिष्ट शब्द प्रयोग करनेसे बड़े कहलाए परन्तु निश्चय ही परमतत्त्वको प्राप्त नहीं कर पाए.

बोले सहु बेसुधमां, कोई वचन काढे विसाल ।
उतपन सरवे मोहनी, ते थै जाय पंपाल ॥ २

इस प्रकार वर्णन करने वालोंने बेसुधिमें (जानकारी बिना) ही अपनी अनेक कविताओंमें विशिष्ट शब्दोंका प्रयोग किया है. परन्तु उनकी वाणी मोह तत्त्वसे उत्पन्न होनेके कारण झूठी सिद्ध होती है.

वेराट कहे मारो फेर अवलो, मूल छे आकास ।
डालो पसरी पातालमां, एम कहे वेद प्रकास ॥ ३

वेदोंमें कहा गया है कि यह विराटका चक्र ही उलटा है, क्योंकि इसका मूल आकाशमें है और शाखाएँ पातालकी ओर फैली हुई हैं.

दोडे सहु कोई फलने, ऊंचा चढे आसमान ।
आकास फल मले नहीं, कोई विचारे नहीं ए वाण ॥ ४

इस संसाररूप वृक्षका फल (सुख) प्राप्त करनेके लिए सब लोग (ऊँची-ऊँची महत्त्वाकांक्षाएँ लेकर) आकाश तक उड़ान भरते हैं, किन्तु उसके फल आकाशमें नहीं मिलते हैं अर्थात् ऐसी झूठी उड़ानमें सुखकी प्राप्ति नहीं होती है. वेदके इन वचनों पर कोई विचार ही नहीं करता.

फल डाल अगोचर, आडी अंतराय पाताल ।
वेराट वेद बंने कोहेडा, गूंथी ते रामत जाल ॥ ५

इस संसाररूपी वृक्षके फल तथा डालियाँ अदृश्य (इन्द्रियातीत) हैं. इस ब्रह्माण्डके बीच पातालसे लेकर वैकुण्ठ तक अज्ञानका परदा टँगा हुआ है. इस अज्ञानताके कारण वैराटका सम्बन्ध और वेदका कर्मकाण्ड ये दोनों अज्ञानियोंके लिए पहेलीके समान बन कर उलझन पैदा करते हैं. यह संसार इस प्रकारके जालमें फँसा हुआ है.

विध बंने दीसे विगते, नाभ ने वली मुख ।
गूंथी जालो बंने जुगते, मानी लीधां दुख सुख ॥ ६

इन दोनों (वेद और वैराट) की उत्पत्ति इस प्रकारकी है कि शेषशायी भगवानकी नाभिसे कमल उत्पन्न हुआ, इस कमलसे ब्रह्माजी उत्पन्न हुए. ब्रह्माजीके मुखसे वेद और वैराटकी सृष्टि हुई. दोनोंके भीतर मायावी अज्ञानताका जाल फैला हुआ है, अर्थात् सब इसीमें अपना सुख दुःख मानकर बैठे हुए हैं.

बंने कोहेडा बे भांतना, वेराट ने वली वेद ।
ए जीव जालो जाली बांध्या, जाणे नहीं कोई भेद ॥ ७

ये दोनों (वेद और वैराट) दो प्रकारकी उलझनें (पहेली) हैं. वैराट द्वारा पारिवारिक सम्बन्ध तथा वेद द्वारा कर्मकाण्डकी उलझन पैदा होती है. जीवको इन दोनोंने कसकर बाँध रखा है. इसका रहस्य (भेद) कोई नहीं जानता.

कडी न लाधे केहने, ए जालोनी जिनस ।
त्रगुणने लाधे नहीं, तो सुं करे मूढ मनिस ॥ ८

वैराट तथा वेदका सच्चा अर्थ और उन्हें खोलनेकी क्षमता किसीके पास नहीं है. यह जाल किस प्रकारका है यह किसीको ज्ञात नहीं है. यहाँ तक कि ब्रह्माण्डके अधिपति ब्रह्मा, विष्णु, महेशको भी यह ज्ञान नहीं है तो यह मूढ़ मनुष्य कर ही क्या सकता है ?

देखाडवा तमने, कोहेडा कीधा एह ।
उखेडी फेर टालुं अवलो, जेम छल न चाले तेह ॥ ९

हे सुन्दरसाथजी ! आप सबको यह झूठा खेल दिखानेके लिए, इस झूठे (अन्धकारपूर्ण) संसारकी रचना की गई है. अब मैं इसका उलटा चक्र (मायावी उलझन) हटाकर उन्हें जड़से उखाड़ दूँगी, ताकि तुम पर मायाके छलका कोई प्रभाव न पड़े.

ताण अवला अताग पूरा, आमलो अवलो एह ।
आतमने खोटी करे, साची ते देखे देह ॥ १०

इस संसार (वैराट) का आकर्षण उलटा (मायाकी ओर ले जाने वाला) है. जिसका कोई अन्त नहीं होता. सत, रज, तमरूपी भँवरी उलटी दिशामें चल रही है. जिसके कारण आत्माको अनित्य और झूठे शरीरको नित्य समझा जाने लगा है.

करे सगाई देहसुं, नहीं आतमनी ओलखाण ।
सनमंध पाले देहसुं, ए मोहजल अवलो ताण ॥ ११

ये संसारी लोग इस नाशवान शरीरके साथ सम्बन्ध स्थापित करते हैं. उन्हें आत्माकी पहचान नहीं है. वे शरीरके साथके मायावी (झूठे) सम्बन्धका पालन करते हैं. इस प्रकार मोहजल (भवसागर) का उलटा ही आकर्षण है.

मरदन अंगे चंदन चरचे, प्रीते प्रीसे पाक ।
सेज्या समारी सेवा करे, जाणे मूल सनमंध साख्यात ॥ १२

मृत्युको प्राप्त होनेवाले इस शरीर पर तेलका मर्दन और चन्दन आदि सुगन्धित द्रव्योंका लेपन करते हैं तथा अत्यन्त प्रेमसे रसोई बनाकर भोजन परोसते हैं. विश्रान्तिके लिए शय्याको ठीक कर अच्छी तरह सेवा शुश्रूषा करते हैं. ऐसा लगता है कि मानों इस शरीरके साथ उनका मूल सम्बन्ध है.

आतम टले ज्यारे अंगथी, त्यारे अंग हाथे बाले ।
सेवा करतां जे वालपणे, ते सनमंध एवो पाले ॥ १३

जब शरीरसे जीव निकल जाता है तब इसकी सेवा करने वाले पुत्र पौत्रादि

जन अपने ही हाथोंसे इसका अग्नि संस्कार करते हैं. बचपनसे ही जिस शरीरकी लाड़ प्यारसे सेवा करते रहे उसीके साथ इस प्रकारका सम्बन्ध रखते हैं.

हाथ पग मुख नेत्र नासिका, सहु अंग तेहनां तेह ।
तेणे घर सहु अभडावियुं, सेवा ते करतां जेह ॥ १४

मृतक शरीरके सब अङ्ग– हाथ, पाँव, मुख, नेत्र, नासिका आदि यथावत् ही हैं, इनमें कोई परिवर्तन दिखाई नहीं देता. जिस शरीरकी वे अच्छी प्रकार सेवा करते थे अब आत्माके निकल जानेके बाद उसी शरीरने पूरे घरको छूत लगा दी है.

अंग सरवे वालां लागे, विछोडो खिण न खमाय ।
चेतन चाल्या पछी ते अंग, उठी उठी खावा धाय ॥ १५

मृत्युसे पूर्व सभी अंग–प्रत्यंग अत्यन्त प्यारे लगते थे. यहाँ तक कि एक क्षणका वियोग भी सहन नहीं होता था किन्तु आत्मारूपी चैतन्यके निकल जानेके बाद शरीरके वही अंग भयानक लगने लगते हैं मानो उठ–उठ कर खानेके लिए दौड़ रहे हों.

सगे मेल्युं ज्यारे सगपण, त्यारे अंगसुं उपनुं वेर ।
ततखिण तेणे झोकी बाली, वहेंची लीधुं घेर ॥ १६

चैतन्यरूपी आत्माने जब शरीरका सम्बन्ध छोड़ दिया तब उसी शरीरके प्रति बैर (वैमनस्य) उत्पन्न हो जाता है. इसलिए उसी समय उस शरीरको अग्निमें जलाकर परिवारके लोग घर और सम्पत्तिका बँटवारा कर लेते हैं.

जीव जीवोना सनमंध मेली, करे सगाई आकार ।
वेराट कोहेडा एणी विधे, अवला ते कै प्रकार ॥ १७

लोग आत्माके सम्बन्धको छोड़कर शरीरके साथ सम्बन्ध स्थापित करते हैं. इस प्रकार यह वैराट उलझनोंसे भरा हुआ माना जाता है. इसमें अनेक प्रकारके उलटेपन हैं.

एम अवलो अनेक भांते, वेराट नेत्रो अंध ।
चेतन विना कहे छोत लागे, वली तेसुं करे सनमंध ॥ १८

इस प्रकार यह संसार अनेक प्रकारसे उलटा है, यहाँके जीव भी आँखें होने पर भी अन्धेके समान हैं. चैतन्यके निकल जाने पर शरीरको अस्पृश्य मानने लगते हैं और पुनः ऐसे ही नाशवान शरीरके साथ सम्बन्ध जोड़ देते हैं.

एक वेष ज विप्रनो, बीजो वेष चंडाल ।
छवे छेडे छोत लागे, संग बोले ततकाल ॥ १९

इस नश्वर शरीरोंमें भी एक ब्राह्मणका वेश है और दूसरा चण्डालका. यदि चण्डाल वेश वालेके दामनका एक किनारा भी छू जाए तो तुरन्त कह उठते हैं कि छूत लग गई.

वेष अंतज रुदे निरमल, रमे मांहें भगवान ।
देखाडे नहीं केहने, मुख प्रकासे नहीं नाम ॥ २०

अंतराय नहीं एक खिणनी, सनेह साचे रंग ।
अहेनिस द्रष्ट आतमनी, नहीं देहसुं संग ॥ २१

शरीर भले ही कोई चण्डाल हो किन्तु यदि उसका हृदय निर्मल हो तथा वह हृदयसे प्रभुके साथ रमण करता हो और अपनी प्रेमाभक्ति किसीको भी न दिखाता हो तथा प्रभुनाम उच्चारण भी बाहर प्रकट नहीं करता हो, ऐसा व्यक्ति क्षणमात्रके लिए भी परमात्मासे दूर नहीं होता. अपितु वह प्रभुके प्रेम और स्नेहके रंगमें रंगकर मस्त रहता है. रात-दिन उसकी दृष्टि आत्मामें ही रत रहती है और शरीरके साथ उसका कोई सम्बन्ध नहीं रहता है.

विप्र वेष बाहेर द्रष्ट, खट करम पाले वेद ।
स्याम खिण सुपने नहीं, जाणे नहीं ब्रह्म भेद ॥ २२

दूसरी ओर ब्राह्मणका वेष धारण करनेवाला मात्र बाह्यदृष्टि ही रखता हो तथा वेद वर्णित छः कर्मों (पढ़ना-पढ़ाना, दान देना-लेना, यज्ञ करना-कराना आदि) का पालन कर वेदोंकी मर्यादा रखता हो तथा कर्मकाण्डमें ही आसक्त होनेके कारण स्वप्नमें भी श्याम सुन्दर श्रीकृष्ण परमात्माको एक क्षणके लिए भी याद न करता हो, वह परब्रह्म परमात्माके यथार्थ भेदको नहीं जान सकता.

उदर कुटम कारणे, उतमाई देखाडे अंग ।
व्याकरण वाद विवादना, अरथ करे कै रंग ॥ २३

ऐसा आडम्बरी व्यक्ति अपने तथा परिवारके पोषणके लिए बाह्य शरीरकी पवित्रताका ढोंग रचता है, तथा शास्त्रोंके वाद-विवादमें पड़कर व्याकरणके अनुसार शब्दोंका अपने अनुकूल अर्थ निकालता है.

हवे कहो केने छवे छेडे, अंग लागे छोत ।
अधमतम विप्र अंगे, चंडाल अंग उदोत ॥ २४

अब आत्म-दृष्टिसे देख कर तुम विचार पूर्वक कहो कि किसका अङ्ग स्पर्श करने पर अस्पृश्यताकी छूत लगती है. वस्तुतः भक्ति विमुख अहंकारी ब्राह्मणका ही अंग अधमतम कहा जाएगा और सदैव भक्ति रसमें ओत-प्रोत चण्डालका अंग श्रेष्ठ माना जाएगा.

ओलखाण सहुने अंगनी, आतमनी नहीं द्रष्ट ।
वेराटनो फेर अवलो, एणी विधे सहु सृष्ट ॥ २५

इस प्रकार संसारके सब लोगोंको झूठे शरीरकी ही पहचान है उनमें आत्म-दृष्टि नहीं है. संसारका यह चक्र ही उलटा है, समस्त सृष्टिकी यही दशा है.

ए जुओ अचरज अदभुत, चाल चाले संसार ।
ए प्रगट दीसे अवलो, जो जुओ करी विचार ॥ २६

हे सुन्दरसाथजी ! इस आश्चर्यजनक तथा अद्भुत संसारको तो देखो, ये संसारी लोग (जीवसृष्टि) कैसे चल रहे हैं. यदि विचार पूर्वक देखेंगे तो प्रत्यक्ष रूपसे सब कुछ उलटा ही दिखाई देगा.

सतने असत कहे, असतने सत करी जाणे ।
ते विध कहीस हुं तमने, अवलो एह एंधाणे ॥ २७

ये लोग सत्य आत्माको असत्य (झूठा) मानते हैं, जब कि असत्य (झूठे शरीर) को सत्य (अमर) समझते हैं. इसका वृत्तान्त आपसे कहती हूँ कि इस प्रकार शरीर एवं वैराटके चिह्न उलटे ही दिखाई देते हैं.

आकारने निराकार कहे, निराकारने आकार ।
आप फरे सहु देखे फरतां, असत ने ए निरधार ॥ २८

ऐसे लोग साकारको निराकार कहते हैं एवं निराकारको साकार कहते हैं. क्योंकि चक्रमें घूमता हुआ व्यक्ति (मस्तिष्क चकरानेसे) समस्त संसारको घूमता हुआ मानता है. इसी प्रकार अज्ञानमें भ्रमित लोग सभीको उलटा समझते हैं.

मूल विना वेराट ऊभो, एम कहे सहु संसार ।
तो भरमनां जे पिंड पोते, ते केम कहिए आकार ॥ २९

यह वैराट (संसार) किसी मूल या आधारके बिना ही खड़ा है. संसारके समस्त प्राणी इस तथ्यको स्वीकार करते हैं, तो फिर यह शरीर भी भ्रमका ही रचा हुआ प्रतीति मात्र है, इसे साकार कैसे कहा जा सकता है ?

आकार न कहिए तेहने, जेहनो ते थाय भंग ।
काल ते निराकार पोते, आकार सच्चिदानंद ॥ ३०

जिसका निश्चित रूपसे नाश होता है उसे साकार नहीं कहना चाहिए. जब काल स्वयं निराकार है तो उसके बन्धनमें बँधनेवाले इस शरीरको साकार कैसे कहा जाएगा ? वास्तवमें आकार (अखण्ड स्वरूप) तो सच्चिदानन्द परमात्माका ही है.

मृगजल द्रष्टे न राचिए, जेहनुं ते नाम परपंच ।
ए छल छे माया तणो, रच्यो ते अवलो संच ॥ ३१

इसलिए हे सुन्दरसाथजी ! मृगजलके समान भ्रमात्मक दिखने वाले इस संसारके भ्रममें मत पड़ो, जिसका नाम ही प्रपंच (झूठा) है. वस्तुतः यह संसार तो छलरूपी मायाका ही नाम है. इसकी रचनाका क्रम ही उलटा है.

वेद मोटो कोहेडो, जेहनी गूंथी ते झीणी जाल ।
कांईक संखेपे कही करी, दऊं ते आंकडी टाल ॥ १

वेदोंमें पहेलीके समान उलझानेवाली बहुत-सी बातें हैं जिसमें कर्म, उपासना व ज्ञानरूपी बारीक जाली बनाई गई है, इसके बारेमें संक्षेपमें वर्णन कर उनका रहस्य खोल रहे हैं.

वेराट आकार सुपननो, ब्रह्मा ते तेहनी बुध ।
मन नारद फरे मांहें, वेदे बांध्या बंध बेसुध ॥ २

वैराटका आकार स्वप्नवत् है, ब्रह्माजी उसमें बुद्धि रूपमें विराजमान है (उनके द्वारा प्रसारित वेदोंके ज्ञानके कारण विश्वका संचालन होता है). मनरूपी नारदजी चंचल होकर सर्वत्र घूमते रहते हैं. इस प्रकार सब कुछ होने पर भी वैदिक कर्मकाण्ड रूपी बन्धनोंमें पड़ कर सब लोग परमात्माके प्रति बेसुध बने हुए हैं.

लगाड्या सहु रबदे, व्याकरण वाद अंधकार ।
एणी बुधे सहु बेसुध कीधां, विवेक टाल्या विचार ॥ ३

व्याकरणवाद (तर्क-वितर्क) ने सबको वाद-विवादमें फँसा कर अन्धकारमें डाल दिया है (परमात्माकी भक्तिमें तर्कका कोई स्थान नहीं है). इस तर्क-वितर्ककी बुद्धिने सबको बेसुध बना दिया है, परिणाम स्वरूप विवेक और विचार उनसे दूर हट गए.

बंध बांध्या वेदव्यासे, वस्त मात्रना नाम बार ।
ते वाणी वखाणी व्याकरणनी, छलवा आ संसार ॥ ४

वेद व्यासजीने वैदिक कर्मकाण्डके नियम बनाए. इसके कारण लोग अर्थज्ञानके अभावमें बन्धनमें फँस जाते हैं. व्याकरणके शब्द ज्ञानमें तो एक अक्षरकी बारह मात्राओंमें खींचातानी होती है. भोले मानवोंको धोखा देनेके लिए व्याकरणके बाह्य ज्ञानकी अधिक प्रशंसा की गई है.

बारे गमां बोलतां, एक अक्षर एक मात्र ।
ते बांधी बत्रीस स्लोकमां, एवो छल कीधो छे सास्त्र ॥ ५

एक-एक मात्रा करके एक अक्षरमें बारह मात्राएँ लगा कर लोग एक शब्दके बारह प्रकारके अर्थ करने लगे और उन मात्राओंको एक श्लोकमें बाँध कर बत्तीस अक्षरों वाला (अनुष्टुप) छन्द बनाया. इस प्रकार अल्पज्ञोंने शास्त्रोंके श्लोकोंकी व्याख्या करते समय चातुर्य्य दिखा कर सामान्य लोगोंको भुलाया है.

लवा लवाना अरथ जुजवा, द्वादसना प्रकार ।
मूल अरथने मुझवी, बांध्या अटकले अपार ॥ ६

अलग-अलग मात्राओंका अलग-अलग अर्थ कर एक ही शब्दके बारह प्रकारके अर्थ दिखलाए. शब्दोंके मूल अर्थको उलटा कर अपनी चतुराईसे उसका नया अर्थ कर लोगोंको भ्रममें डाल दिया.

अरथने नाखवा अवलो, गमोगमां ताणे ।
मूढोने समझाववा, रेहेस वचमां आणे ॥ ७

अल्पज्ञानी जन अहंकारके कारण अपने चातुर्यको दिखानेके लिए मूल अर्थको उलटा बताकर शास्त्रोंके अर्थ करनेमें खींचातानी करते हैं. अज्ञानी लोगोंको समझानेके लिए कहते हैं कि उनके अर्थमें रहस्य छिपा हुआ है और इसकी पुष्टिके लिए बीच बीचमें कथा, वार्ता तथा दृष्टान्त भी सुनाते रहते हैं.

एवी आंकडियुं अनेक मांहे, ते ताणे गमां बार ।
रंचक रेहेस आणी मधे, बांध्या बुधे विचार ॥ ८

शास्त्रोंमें ऐसे अनेक भेद हैं जिनके अर्थ बारहों तरफ खींचे जा सकते हैं. शास्त्रोके ऐसे प्रसंगोंका अर्थ करने वाले अल्पज्ञ जन अपनी चातुर्यपूर्ण बुद्धि द्वारा बीच-बीचमें रोचक वार्ताओंका समावेश कर लोगोंको भ्रमित करते हैं.

अक्षर एक बारे गमां बोले, एवा स्लोक मांहें बत्रीस ।
ए छल आणी अरथ आडो, खोले छे जगदीस ॥ ९

खींचातानी करनेसे तो एक-एक अक्षरके बारह अर्थ हो जाते हैं. अनुष्टुप

छन्दमें एक श्लोकमें बत्तीस अक्षर होते हैं. उनका अर्थ समझाते समय बीच बीचमें छल-कपटका भी प्रवेश हो जाता है. ऐसे छल-कपटके माध्यम द्वारा पण्डितजन प्रभुकी खोज करते हैं.

एवा छल अनेक अरथ आडा, ते अरथ मांहें कै छल ।
अक्षरा अरथ छल भावा अरथ आडो, पछे करे भावा अरथ अटकल ॥१०

इस प्रकार वस्तु ज्ञान (तत्त्वज्ञान) के साथ-साथ ऐसे छल-कपट भरे शब्द भी जोड़ते हैं. इसलिए अर्थ करते समय चतुराईका उपयोग करते हैं. जब शब्दार्थमें ही छलका उपयोग होता है तो भावार्थ भी इसी प्रकार उलटा ही होगा अर्थात् भावार्थको भी अटकल द्वारा ही दर्शाया जाएगा.

ते बेसे पंडित विस्नु संग्रामे, एक कानाने कडका थाय ।
मांहोंमांहे वढी मरे, एक मात्रा न मेलाय ॥ ११

ऐसे शब्दज्ञानी पण्डित धर्मयुद्ध (शास्त्रार्थ) करनेके लिए बैठते हैं और शब्द तथा मात्राओंका विश्लेषण करते हुए परस्पर झगड़ने लगते हैं, किन्तु एक मात्राको भी नहीं छोड़ सकते.

वादे वाणी सीखे सूरा, सुध बुध जाय सान ।
स्वांत त्रास न आवे सुपने, एहवुं व्याकरण ग्यान ॥ १२

ऐसे वाद-विवादको सीख कर तथाकथित पण्डित अपने आपको वीर शक्तिशाली समझते हैं और वादविवाद करते हुए अपनी सुधि और बुद्धि खो बैठते हैं. उन्हें स्वप्नमें भी शान्ति नहीं मिलती और परमात्माका डर भी नहीं लगता. व्याकरणका बाह्य (शब्द) ज्ञान इस प्रकारका होता है.

ते वाणी व्यासे कीधी मोटी, दीधुं छलने मान ।
तेमां पंडित ताणोताण करे, मांहें अहंमेव ने अग्यान ॥ १३

इस प्रकार शास्त्र वचनोंका विस्तार पूर्वक वर्णन किया गया, जिसके कारण वादविवादको पोषण मिला. बाह्य ज्ञानके विवादमें पड़कर पण्डित परस्पर खींचातानी करते हैं. क्योंकि उनके हृदयमें अज्ञान और अहंकार भरा हुआ होता है.

ए छल पंडित भणीने, मान मूढोमां पामे ।
ए मूढ पंडित सहु छलना, भूलव्या एणी भोमे ॥ १४

इस प्रकारका छल तथा चतुराईयुक्त ज्ञान सीखे हुए पण्डित लोग अहङ्कारके वशीभूत होकर अल्पज्ञोंके बीच मान-प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं. ऐसे मूढ़ पण्डित अपने छल-कपट द्वारा संसारमें भ्रम पैदा करते हैं और स्वयं भी भ्रममें पड़े रहते हैं.

आ प्रगट जे प्राक्रत, जेमां छल कांई न चाले ।
एमां अरथ न थाय अवलो, ते पंडित हाथ न झाले ॥ १५

यह जो हमारी स्पष्ट तथा प्राकृत बोलचालकी भाषा (हिन्दी) है, इसमें किसी भी प्रकारका छल कपट नहीं चल सकता तथा इस भाषामें उलटा अर्थ भी नहीं लगा सकते. परन्तु ऐसी भाषाको पण्डित लोग हाथ भी नहीं लगाते अर्थात् मान्यता ही नहीं देते.

आ पाधरी वाणी मांहें प्रकट, एक अरथ नव दाखे ।
वचन वलाके त्यारे आणे, ज्यारे छलमां नाखे ॥ १६

इस सीधी-साधी भाषामें तत्त्वज्ञान स्पष्ट रूपसे समझा जा सकता है, फिर भी इस भाषाका एक अर्थ भी ये लोग नहीं देखते हैं. सामान्य मानवोंको छलमें डालनेके लिए ये अपनी वाणीमें खींचातान खड़े करते हैं.

ए छल रामत जेहनी ते जाणे, बीजी रामत सहु छल ।
ए छलना जीव न छूटे छलथी, जो देखो करतां बल ॥ १७

इस मायावी संसारके खेलको वही आत्माएँ जान सकतीं हैं जिनके लिए यह बनाया गया है. अन्य संसारी जीवोंके लिए तो यह खेल छल मात्र है. इस छलके जीव कभी भी छलसे छूट नहीं सकते, यद्यपि वे परमात्माकी प्राप्तिके लिए प्रयास तो करते हैं.

पहेली मुझवण कही वेराटनी, बीजी वेदनी मुझवण ।
ए संखेपे कही में समझवा, ए छल छे अति घण ॥ १८

पूर्व प्रकरणोंमें वैराट सम्बन्धी उलझनके विषयमें स्पष्ट रूपसे कहा है. दूसरी

उलझन वेद व्याकरण रूपी जालके विषयमें भी यहाँ पर कहा. संक्षेपमें समझानेके लिए मैंने इस प्रकार कहा है, परन्तु यह छल तो अत्यन्त गम्भीर है.

मुख उदर केरा कोहेडा, रच्या ते मांहें सुपन ।
सुध केहने थाय नहीं, मांहें झीले ते मोहना जन ॥ १९

शेषशायी नारायणके नाभीकमलसे उत्पन्न होकर ब्रह्माजीने चौदह लोकमें सृष्टिकी रचना की और अपने श्रीमुखसे वैदिक ज्ञानको अभिव्यक्त किया. इस प्रकार यह सृष्टि स्वप्नकी ही बनाई गई है, किन्तु किसीको भी इसकी सुधि नहीं होती. क्योंकि मायाके जीव माया-मोहमें ही मग्न रहते हैं.

वेराट वेदे जोई करी, सेवा ते कीधी एह ।
देव तेहवी पातरी, संसार चाले जेह ॥ २०

वेदोंने वैराट (संसारीजीवों) को देखकर कर्मकाण्डका ज्ञान देनेकी जो सेवा की है, वह वैराटके स्वप्नवत् प्राणियोंके लिए अनुकूल ही है. क्योंकि जैसे देवताएँ क्षर ब्रह्माण्डके हैं, उनके पूजक भी इसी क्षर ब्रह्माण्डके जीव हैं. इस प्रकार संसारमें पूजा पद्धति चल रही है.

बोल्या वेद कतेब जे, जेहनी जेटली मत ।
मोह थकी जे उपना, तेहने ते ए सहु सत ॥ २१

वेद तथा कुरान इस प्रकार कहते हैं- जैसी जिसकी बुद्धि है वह वैसा ही ग्रहण करता है. इसलिए मोह मायासे उत्पन्न जीवोंके लिए उपरोक्त बातें सत्य लगने लगतीं हैं.

लोक चौदे जोया वेदे, निराकार लगे वचन ।
उनमान आगल कही करी, वली पडे ते मांहें सुंन ॥ २२

वेदोंने और वैदिक ऋषियोंने पूरे चौदह लोकोंमें ब्रह्मकी खोज की और आगे निराकार तक पहुँचे फिर भी ब्रह्मका पूर्ण अनुभव न होनेके कारण उन्होंने अनुमानसे कहा कि ब्रह्म तो इससे भी आगे है. इस प्रकार उनकी बुद्धि पुनः शून्य निराकारमें समाहित हो गई.

प्रगट देखाडुं पाधरा, पांचे ते जुजवा तत्व ।
रमे सहु मन मोह मांहें, सहु मननी उतपत ॥ २३

हे सुन्दरसाथजी ! मैं तुमको स्पष्ट समझाऊँ. सबका मन इन्हीं पाँचों तत्त्वोंके मोहमें खेलता (फँस जाता) है. ये पाँचों तत्त्व अलग-अलग हैं. वास्तवमें इन सबकी उत्पत्ति भी अक्षरब्रह्मके मन स्वरूप विराट पुरुषसे ही हुई है अर्थात् यह संसार मनकी ही उत्पत्ति है.

सकल मांहें व्यापक, थावर ने जंगम ।
सहु थकी ए असंग अलगो, ए एम कहावे अगम ॥ २४

यह मन स्थावर (पेड़-पौधे) तथा जंगम (पशु-पक्षी) समस्त सृष्टिमें व्याप्त हैं. फिर भी इन सबसे असङ्ग हैं. इसलिए विभिन्न स्थानों पर उसे अगम कहा गया है.

दसो दिसा भवसागर, जुए ते एह सुपन ।
आवरण पाखल मोहनुं, निराकार कहावे सुंन ॥ २५

भवसागरकी दशों दिशाओंमें मोहजल भरा हुआ दिखाई देता है. यह सब स्वप्नके समान झूठा है. मोहतत्त्वके आवरणने चौदह लोकोंको चारों ओरसे घेर रखा है, जिसे शून्य निराकार कहते हैं.

ए ब्रह्मांडनो कोई कोहेडो, रामत चौदे भवन ।
सुर असुर कै अनेक भांते, छलवा छल उतपन ॥ २६

यह संसार उलझनों (कोयड़ों) के कारण अन्धकाररूप है. चौदह लोकोंके खेल (रामतें) भी उलझनोंसे भरे हुए हैं. उनके बीच देव-दानव आदि कई प्रकारके जीव रहते हैं जो छल रूपी मायामें भ्रमित करनेके लिए उत्पन्न हुए हैं.

वनसपती पसु पंखी, मनख जीव ने जंत ।
मछ कछ जल सागर साते, रच्यो सहु परपंच ॥ २७

इस संसारमें वृक्ष, लताएँ, पशु-पक्षी, मनुष्य तथा अनेक प्रकारके जीवजन्तु हैं. मगरमच्छ, मछली, कच्छप तथा सातों समुद्र भी इसीके अन्दर आते हैं. इस प्रकार यह झूठा संसार (मायावी प्रपंच) रचा गया है.

जीवो मांहें जनस जुजवी, उपनी ते चारे खान ।
थावर जंगम सहु मली, लाख चोरासी निरमान ॥ २८

यहाँ पर जीवोंमें भी अलग-अलग प्रकारके जीव हैं जिनकी उत्पत्ति चार प्रकारसे [जरायुज (गर्भसे उत्पन्न होने वाले), अण्डज (अण्डेसे उत्पन्न), स्वेदज (पसीनेसे उत्पन्न) और उद्भिज जमीनसे उत्पन्न)] मानी गई है. इस प्रकार स्थावर और जंगम सबको मिला कर चौरासी लाख योनिकी रचना होती है.

[बीस लाख स्थावर, नौ लाख जलचर, ग्यारह लाख कीट, दश लाख पक्षी, तीस लाख चतुष्पद, चारलाख मनुष्य इस प्रकार चौरासी लाख योनि गिनाई गई है.]

कोई वैकुंठ कोई जमपुरी, कोई स्वर्ग पाताल ।
रमे पांचेनां मांहें पुतलां, बीजा सागर आडी पाल ॥ २९

शुभ कर्म करनेवाले वैकुण्ठ जाते हैं और अशुभ कर्म करने वाले यमपुरी जाते हैं. कुछ स्वर्गगामी हैं तो कुछ पातालगामी हैं. सर्वत्र इन पाँच तत्त्वोंसे बने हुए पुतले इन्हीं पाँचों तत्त्वोंसे निर्मित संसारमें रमण कर रहे हैं. मनुष्यके अतिरिक्त अन्य योनियोंके लिए मोह सागर अवरोधक बना हुआ है.

ए रामतनो वेपार करे, तेहने माथे जमनो दंड ।
कोइक दिन स्वर्ग सोंपी, पछे नरक ने कुंड ॥ ३०

इस संसारमें जो लोग मायावी छल-कपटका व्यापार (अशुभ कर्म) करते हैं, उन्हें निश्चित रूपसे यमपुरीका दण्ड भोगना पड़ेगा. यद्यपि थोड़े समयके लिए शुभ कर्मोंका सुख भोगनेके लिए उन्हें स्वर्गमें रहनेका अवसर मिलता है परन्तु अन्ततः नरककुण्डका दुःख भोगना ही पड़ता है.

तेरे लोके आण फरे, संजमपुरी सिरदार ।
जे जाणे नहीं जगदीसने, ते खाय मोहोकम मार ॥ ३१

सतलोकको छोड़कर शेष तेरह लोकों पर यमपुरीके सिरदार यमराज (धर्मराज) का शासन है. जो वैकुण्ठाधिपति जगदीशको नहीं जानता है, उसे यमराजका भयानक दण्ड भोगना पड़ता है.

ए रामतनी लेव देव मेली, करे वैकुंठनो वेपार ।
ए जीवोनी मोक्ष सतलोक, कोई पार निराकार ॥ ३२

जो लोग मायावी लेन-देन छोड़कर वैकुण्ठका व्यापार (नवधा भक्ति) करते हैं, ऐसे जीवोंका मुख्य स्थान सत लोक ही है. कुछ जीव वैकुण्ठके पार निराकार तक पहुँच जाते हैं.

चौद लोक इंडा मधे, भोम जोजन कोट पचास ।
अष्ट कुली परवत जोजन, लाख चोसठ वास ॥ ३३

चौदह लोक ब्रह्माण्डके बीच पचास करोड़ योजनकी पृथ्वी है. इस पृथ्वीको मर्यादित रखनेके लिए आठों दिशाओंमें आठ बड़े बड़े पर्वत हैं. और चौसठ लाख योजनमें ही वस्ती बसी हुई है.

पांच तत्व छठी आतमा, सास्त्र सर्वमां ए मत ।
ए निरमाण बांधीने, लई सुपन कीधुं सत ॥ ३४

इस शरीरमें पाँच तत्त्व तथा छठी विशुद्ध आत्मा है. प्रत्येक शास्त्रका यही मत है. इस प्रकार संसारकी रचनामें बँध कर इस स्वप्नवत् झूठे संसारको हम सत्य मान बैठे हैं.

जोया ते साते सागर, अने जोया ते साते लोक ।
पाताल साते जोईया, जाग्या पछी सहु फोक ॥ ३५

मैंने सातों सागर देखें हैं, ऊपरके सातों लोक तथा नीचेके सातों पाताल भी देखें हैं, परन्तु आत्म-जागृति हो जानेके बाद ऐसा प्रतीत होता है कि यह सब झूठा है.

प्रकरण ६ चौपाई १९३

अवतारोनुं प्रकरण

एह छल तां एवो हुतो, जेमां हाथ न सूझे हाथ ।
द्रष्ट दीठे बंध पडे, तेमां आव्यो ते सघलो साथ ॥ १

इस संसारमें अज्ञानरूपी अन्धकार इस प्रकार व्याप्त था, जिसके कारण एक हाथसे दूसरे हाथकी जितनी दूरी भी नहीं सूझती थी. इसमें दृष्टिमात्र डालने

पर (जन्म लेते) ही मनुष्य मोहके बन्धनमें फँस जाता है. ऐसे अन्धकार रूप संसारमें ब्रह्मात्माएँ आईं.

ते माटे वालेजीए, आवीने छोड्यो साथ ।
बीज लावी घर थकी, कीधो जोतनो प्रकास ॥ २

इसलिए प्रियतम सद्‌गुरुने इस संसारमें आकर मायामें फँसी हुई ब्रह्मात्माओंको मायावी बन्धनसे मुक्त किया. वे अखण्ड घर परमधामसे तारतम ज्ञानका बीज ले आए और उन्होंने इसकी ज्योतिका प्रकाश फैलाया.

ए रामत करी तम माटे, तमे जोवा आव्या जेह ।
रामत जोई घेर चालसुं, वातो ते करसुं एह ॥ ३

हे सुन्दरसाथजी ! यह मायावी संसारका खेल तुम्हारे लिए ही रचाया गया है, जिसे देखनेके लिए तुम सब यहाँ आए हो. इस खेलको देख कर अब हम पुनः परमधाम चलेंगे और वहाँ जाकर यहाँकी बातें करेंगे.

हवे चौद लोक चारे गमां, में मथ्यां जोई वचन ।
मोहजल सागर मांहेथी, काढ्यां ते पांच रतन ॥ ४

मैंने चौदह लोकों तथा चारों दिशाओंके सब शास्त्र पुराणोंके वचनोंका अवलोकन कर उनका मन्थन किया, और इस भव सागरके मोहजलसे पाँच रत्न निकाले अर्थात् उत्तम ज्ञानधारा वाली पञ्च वासनाओंको परखा.

पहेलां कह्या में साथने, पांचे तणां ए नाम ।
सुकदेव ने सनकादिक, महादेव भगवान ॥ ५

मैंने सुन्दरसाथको पहले ही इन पाँच रत्नों (वासनाओं) के नाम कह दिए हैं. इनमें एक हैं शुकदेव मुनि, दूसरे ब्रह्माजीके मानसपुत्र सनकादि तथा तीसरे भगवान महादेव हैं.

नारायण लखमी विस्नु मांहें, विस्नु थकी उतपन ।
अंग समाए अंगमां, ए नहीं वासना अन ॥ ६

नारायण तथा लक्ष्मीका नाम विष्णु भगवानके अन्दर ही समाविष्ट है. क्योंकि वे महाविष्णुसे ही उत्पन्न हुए हैं. महाविष्णुके अंग होनेके कारण वे उनके अंगमें ही समा जाते हैं. इसलिए लक्ष्मीनारायण अलग-अलग वासना नहीं हैं.

कबीर साख ज पूरवा, लाव्यो ते वचन विसाल ।
प्रगट पांचे ए थया, बीजा सागर आडी पाल ॥ ७

पाँचवें रत्नके रूपमें महात्मा कबीर ब्रह्मसृष्टिकी साक्षी देनेके लिए विशिष्ट वचन लेकर आए हैं. इस प्रकार उपरोक्त पाँच रत्न (वासनाएँ) प्रकट हुए. इन पाँचोंके अतिरिक्त दूसरोंके लिए अक्षरब्रह्म तक पहुँचनेके मार्गमें यह मोहसागर अवरोधक बन कर खड़ा हुआ है.

वली एक कागल काढिया, सुकदेवजीनो सार ।
हदियो कोहेडा, बेहदी समाचार ॥ ८

इस भवसागरके मन्थनसे पुनः एक सार रूपमें शुकदेवजी द्वारा लाया गया पत्र (श्रीमद्भागवत) निकाला. यह भागवत संसारी (अज्ञानी) प्राणियोंके लिए एक उलझनरूप पहेली है, किन्तु ब्रह्ममुनियों (बेहदी) के लिए समाचार-पत्र है.

तमे रामत जोवा कारणे, इछा ते कीधी एह ।
ते माटे सहु मापियुं, आ कह्युं कौतुक जेह ॥ ९

हे सुन्दरसाथजी ! तुमने संसारके खेल देखनेकी इच्छा प्रकट की थी, इसलिए मैंने इस संसारको मापा और कौतुहलवश सार तत्त्वके रूपमें पञ्चवासना और भागवतकी बात की.

अमे रामत खरी तो जोई, जो अखंड करूं आ वार ।
बुधने सोभा दऊं, सत करी प्रगट पार ॥ १०

हमने मायावी संसारका खेल अच्छी तरह देखा, किन्तु इसकी सार्थकता तभी मानी जाएगी जब मैं उसे अक्षरब्रह्मके मनमें अंकित कर अखण्ड (शाश्वत) बना दूँ एवं शून्य निराकारसे परे परमधामके अखण्ड सुखोंको प्रकट कर यह सम्पूर्ण शोभा (श्रेय) उनकी बुद्धिको दे दूँ.

अवतार चोवीस विस्नुनां, वैकुंठथी आवे जाए ।
ते विध सरवे कहुं विगते, जेम सनंध सहु समझाए ॥ ११

विष्णु भगवानके चौबीसों अवतार वैकुण्ठ धामसे आते हैं तथा अपना कार्य

पूर्ण होने पर लौट जाते हैं. उन अवतारोंका विवरण विस्तार पूर्वक प्रकट कर दूँ ताकि पूर्ण ज्ञान समझमें आ जाए.

अवतार एकवीस ए मधे, ते आडो थयो कलपांत ।
बीजा त्रण जे मोटा कह्या, तेहनी कहुं जुजवी भांत ॥ १२

इन चौबीस अवतारोमें भगवान विष्णुके इक्कीस अवतार ऐसे हुए हैं जो कल्पान्त भेदके अन्तर्गत प्रलयमें आ जाते हैं. परन्तु शेष तीन अवतार बड़े कहे गए हैं, जो अखण्ड धामकी लीलाके साथ सम्बन्धित हैं. उन तीनों अवतारोंका भेद अलग अलग स्पष्ट कर रही हूँ.

अवतार एक श्रीक्रस्ननो, मूल मथुरा प्रगट्यो जेह ।
वसुदेवने वायक कही, वैकुंठ वलियो तेह ॥ १३

इन तीनोंमें एक अवतार श्रीकृष्णका है जो मूलरूपसे मथुरामें प्रकट हुए और वसुदेवको सचेत करवा कर वैकुण्ठ लौट गए.

गोकल सरूप पधारियो, तेहने न कहीए अवतार ।
ए तो आपणी अखंड लीला, तेहनो ते कहुं विचार ॥ १४

वसुदेवजीके साथ गोकुलमें जो (दो भुजा वाले) स्वरूप पधारे हैं, उन्हें भगवान विष्णुका अवतार नहीं कहा जा सकता. यह तो हमारे सुन्दरसाथ (ब्रह्मात्माओं) के साथ अखण्ड लीलामें रमण करने वाला स्वरूप है. अब इनके विषयमें अपना विचार व्यक्त कर रही हूँ.

संखेपे कहुं में समजवा, भाजवा मननी भ्रांत ।
एहनो छे विस्तार मोटो, आगल कहीस व्रतांत ॥ १५

इस स्वरूपको एवं अखण्ड लीलाको समझानेके लिए तथा मनकी भ्रान्तियोंको मिटानेके लिए मैं संक्षेपमें वर्णन करती हूँ. वैसे तो इसका विस्तार अति बड़ा है. इसका वर्णन आगे गोकुल लीलामें करेंगे.

कलपांत भेद आहीं थकी, तमे भाजो मनना संदेह ।
अवतार ते अक्रूर संगे, जई लीधी मथुरा ततखेव ॥ १६

कल्पान्त भेद यहींसे समझना चाहिए. (ग्यारह वर्ष और बावन दिन तक

व्रजमें लीला करनेके बाद अखण्ड रासके लिए योगमायाका ब्रह्माण्ड बना और सब सखियाँ योगमायाके ब्रह्माण्डमें बुलाई गईं तब कालमायाके ब्रह्माण्डका नाश हुआ. इसी तथ्यको कल्पान्त भेद कहकर समझाया गया है.) तुम इसे समझकर अपने मनका सन्देह दूर करो. गोलोकी स्वरूप श्रीकृष्ण अक्रूरके साथ मथुरा गए और कंसका वध कर उसी क्षण मथुराको हस्तगत किया.

विचार छे वली ए मधे, तमे सांभलो दई चित ।
आसंका सहु करूं अलगी, कहुं तेह विगत ॥ १७

इस लीलामें छिपा हुआ रहस्य विचारणीय है. इसलिए इसे ध्यान पूर्वक सुनो. मैं वास्तविकताका वर्णन कर तुम्हारी सब प्रकारकी शंकाओंको दूर कर दूं.

दिन अग्यारे भेष लीला, संग गोवाला तणी ।
सात दिन गोकल मधे, पछे चाल्या मथुरा भणी ॥ १८

श्रीकृष्णजीने ग्वाल-बालोंके साथ ग्यारह दिनोंकी बाललीला की. वह वेश लीला (मूलतः ग्यारह वर्ष बावन दिनके अक्षरातीतके आवेशयुक्त श्रीकृष्णका वेश-वंशी, मुकुट, वस्त्रादि धारण करनेवाले अक्षर ब्रह्मके आवेशयुक्त श्रीकृष्णकी ग्यारह दिनकी लीला) है. जिसमें सात दिनोंकी लीला तो गोकुलकी है. इसके बाद वे अक्रूरके साथ मथुराकी ओर चले गए.

धनक भाजी हस्ती मल मारी, त्यारे थया दिन चार ।
कंस पछाडी वसुदेव छोडी, इहां थकी अवतार ॥ १९

मथुरा पहुँचकर धनुषको तोड़ा. कुवलयापीड़ हाथीको मारा तथा चाणूर एवं मुष्टिक आदि पहलवानोंका संहार किया. कंसको मारकर वसुदेव तथा देवकीको बन्धन मुक्त किया. इतनेमें चार दिन व्यतीत हो गए. अब यहाँसे श्रीकृष्ण विष्णु भगवानके अवतार कहलाए.

जुध कीधुं जरासिंधसुं, रथ आउध आव्यां जिहां थकी ।
क्रस्न विस्नुमय थया, वैकुंठमां विस्नु त्यारे नथी ॥ २०

जरासन्धके साथ युद्ध करनेके लिए श्रीकृष्ण तथा बलरामके पास अपने

अपने स्थानसे रथ तथा शस्त्र आ गए (वैकुण्ठसे रथ, शंख, चक्र, गदा, पद्म तथा पातालसे हल और मूसल आए). उसी समयसे श्रीकृष्ण विष्णुमय बन गए. उस समय वैकुण्ठमें विष्णु भगवान नहीं थे अर्थात् सोलह कलाओंके साथ मृत्युलोकमें आए हुए थे.

वैकुंठथी जोत वली आवी, सिसपाल होम्यो जेह ।
मुख समाणी श्रीक्रस्नने, पूरी साख सुकदेवे तेह ॥ २१

श्रीकृष्णजीने शिशुपालके मस्तकको अपने सुदर्शन चक्र द्वारा काट डाला. तब उसकी आत्मा वैकुण्ठमें जाकर लौट आई और श्रीकृष्णके मुखमें समाहित हो गई. इसकी साक्षी शुकदेवमुनिने श्रीमद्भागवतमें दी है.

कीधुं राज मथुरा द्वारका, वरस एक सो ने बार ।
प्रभास सहु संघारीने, उघाड्यां वैकुंठ द्वार ॥ २२

इस प्रकार श्रीकृष्णजीने मथुरा तथा द्वारकामें ११२ वर्ष तक राज्य किया और प्रभास पाटणमें सम्पूर्ण यादव कुलका संहार कर वैकुण्ठके द्वार खोले अर्थात् वैकुण्ठ गमन किया.

दिन आटला गोप हुतो, मोटी बुधनो अवतार ।
लवलेस कांईक कहुं एहनो, आगल अति विस्तार ॥ २३

इतने दिनों तक (रासलीलाके बाद अभी तक) अक्षरब्रह्मकी महान बुद्धिका अवतार गुप्त (सुषुप्त) था. अब बुद्धजीके अवतारका वर्णन अति संक्षेपमें कर दूँ, क्योंकि आगे जाकर इसका विस्तृत वर्णन होगा.

कोईक काल बुध रासनी, ग्रही जोगवाई सकल ।
आवी उदर मारे वास कीधो, वृध पामी पल पल ॥ २४

कुछ समय तक (अर्थात् पाँच हजार वर्षोंतक) अक्षरब्रह्मकी बुद्धि रास मण्डलकी सामग्री लेकर ध्यानावस्थामें बैठी रही. अब उसी बुद्धिने आकर हमारे हृदयस्थलमें वास किया तथा वह तारतमका बल प्राप्त कर प्रतिक्षण बढ़ने लगी.

अंग मारे संग पामी, में दीधुं तारतम बल ।
ते बल लई वेराट पसरी, ब्रह्मांड थासे निरमल ॥ २५

जब अक्षरकी बुद्धि मेरे अङ्ग (हृदय) में आ गई तब मैंने उसे तारतमकी शक्ति प्रदान की. इसी शक्तिको लेकर वह पूरे ब्रह्माण्डमें विस्तृत हुई. इसके कारण अब यह ब्रह्माण्ड निर्मल (अखण्ड) हो जाएगा.

दैत कालिंगो मारीने, सनमुख करसे ततकाल ।
लीला अमारी देखाडीने, टालसे जमनी जाल ॥ २६

कराल कलियुग रूपी राक्षस (दज्जाल) को मार कर, यह बुद्धि सबको एक अद्वैत ब्रह्मकी ओर सम्मुख करेगी तथा हमारी (अक्षरातीत परमधामकी) लीला दुनियाँको दिखाकर उन्हें यमराजके जाल (जन्ममरण) से मुक्त करेगी.

आ देखो छो दैत जोरावर, व्यापी रह्यो वेराट ।
काम क्रोध उनमद अहंकार, चाले आपोपणी वाट ॥ २७

कलियुगरूपी इस शक्तिशाली राक्षसको आप सब देख रहे हैं जो समग्र संसारके लोगोंके हृदयमें व्याप्त है इसलिए काम, क्रोध, उन्माद तथा अहंकार, ये सब अपने-अपने मार्ग पर मनमाने चल रहे हैं.

वेराट आखो लोक चौदे, चाले आपोपणी मत ।
मन माने रमे सहुए, फरीने वल्युं असत ॥ २८

चौदह लोकों सहित यह सम्पूर्ण संसार (वैराट) अपनी-अपनी बुद्धिके अनुसार चल रहा है. सब लोग मनकी इच्छा अनुसार रमण कर रहे हैं. इस प्रकार संसारमें सर्वत्र असत् छाया हुआ है.

एणे संघारसे एक सबदसुं, वार न लागे लगार ।
लोक चौदे पसरसे, ए बुध सबदनो मार ॥ २९

अब बुद्धजी एक ही शब्दमें इनका संहार करेंगे. इस अज्ञानको समाप्त करनेमें उन्हें क्षण मात्रका भी समय नहीं लगेगा. इस प्रकार चौदह लोकोंमें बुद्धजीके शब्दों (अखण्डवाणी) का प्रवाह फैल जाएगा.

हुं मारुं तो जो होए कांईए, न खमे लवानी डोट ।
मारी बुधने एक लवे एवा, मरे ते कोटान कोट ॥ ३०

यदि कलियुगरूपी दज्जालका कोई अस्तित्व (आकार) हो तो मैं इसे अवश्य मार दूँ. क्योंकि यह दज्जाल मेरी जागृत बुद्धि (तारतम ज्ञान) के एक शब्दको भी सहन नहीं कर सकता, मेरी बुद्धिके एक अंश मात्रसे ऐसे करोड़ों दज्जाल (कलियुगी बुद्धि) नाश हो सकते हैं.

उठी छे वाणी अनेक आगम, एहनो गोप छे अजवास ।
वेराट आखो एक मुख बोले, बुधने प्रकास ॥ ३१

अनेक वक्ताओंने तथा धर्मग्रन्थोंने पहलेसे ही बुद्धावतारकी भविष्यवाणी की है, किन्तु उसका प्रकाश अभी तक गुप्त रहा. अब बुद्धजीके तारतम ज्ञानके प्रकाशमें ब्रह्माण्डके सम्पूर्ण प्राणी एक ही ध्वनिसे परमात्माके गुणगान करेंगे.

चालसे सहु एक चाले, बीजुं ओचरे नहीं वाक ।
बोले तो जो कांई होए बांकी, चूंथी उडाड्युं तूल आक ॥ ३२

अब विश्वके सभी प्राणी एक ही मार्ग पर चलेंगे. अक्षर–अक्षरातीतके अतिरिक्त अन्य किसी भी वाणीका उच्चारण नहीं करेंगे. तभी कोई अलग बात कर सकता है जब बुद्धजीके ज्ञान द्वारा कुछ कहना शेष रह गया हो. क्योंकि बुद्धजीके ज्ञानने आककी रूईके रेशेकी भाँति अज्ञानताको पहलेसे ही जड़से उखाड़ कर हवामें उड़ा दिया है, अर्थात् चौदह लोकोंको मिथ्या सिद्ध कर दिया है.

हवे ए वचन कहुं केटलां, एनो आगल थासे विस्तार ।
मारे संग आवी ए निध पामी, ते निराकारने पार ॥ ३३

अब मैं ये बातें कहाँ तक कहूँ. भविष्यमें इनका बहुत विस्तार होगा. अक्षरब्रह्मकी बुद्धिने मेरे साथ आकर निराकारसे परे परमधामकी इस अखण्ड सम्पत्ति (तारतम ज्ञान) को प्राप्त किया.

पार बुध पाम्या पछी, एहनो मान मोटो थासे ।
अक्षर खिण नव मूके अलगी, मारी संगते एम सुधरसे ॥ ३४

अखण्ड परमधामका तारतम ज्ञान प्राप्त करनेके बाद अक्षरकी बुद्धिको प्रतिष्ठा

प्राप्त होगी. फिर अक्षरब्रह्म इसे क्षणमात्रके लिए भी अलग नहीं करेंगे. इस प्रकार मेरे सत्संगके द्वारा अक्षरकी बुद्धिमें सुधार होगा.

अवतार जे नेहकलंकनो, ते अस्व अधुरो रह्यो ।
पुरुष दीठो नहीं नैणे, तुरीने कलंकी तो कह्यो ॥ ३५

जो तीन अवतार बड़े कहे गए हैं, उनमें-से निष्कलङ्क अवतारका सङ्केत सवारी बिनाके घोड़ेसे किया है. उसके तीन पैर पृथ्वी पर हैं और एक पैर ऊँचा ऊठा हुआ है तथा घोड़े पर कोई सवार न होनेके कारण उसे अधूरा कहा गया है. उस घोड़े पर आरोहण करने वाले पुरुषको शुकदेव मुनि अपनी आँखोंसे न देख सके. इसलिए घोड़ेको कलंकित कहा (आरोही मिलने पर जब घोड़ा चारों पैर पृथ्वी पर रखेगा तभी निष्कलंक कहलाएगा).

अवतार आ बुधना पछी, हवे बीजो ते थाय केम ।
विकार काढी सहु विस्वना, सहु कीधां अवतारना जेम ॥ ३६

इस बुद्ध अवतारके बाद अब दूसरा अवतार किस प्रकार होगा ? क्योंकि सांसारिक प्राणियोंके विकारको अक्षरातीतके अखण्ड तारतम ज्ञान द्वारा दूर कर उन्हें भी अन्य अवतारी पुरुषोंके समान ही बना दिया है.

अवतारथी उतम थया, तिहां अवतारनुं सुं काम ।
कीधो सरवालो सहुनो, इहां बीजुं न राख्युं नाम ॥ ३७

(अखण्ड परमधाम तथा अक्षरातीतके तारतम ज्ञानके प्रसार एवं प्रकाशके कारण) संसारके मनुष्य भी (कथनी तथा रहन-सहनमें) अवतारोंसे भी उत्तम हो गए हैं. ऐसी स्थितिमें अब अवतारोंका प्रयोजन ही क्या रहा ? इसी अवतारमें सभी अवतारोंकी शक्ति तथा ज्ञानराशि समाविष्ट हो गई है. इसलिए अन्य किसी अवतारका नाम नहीं रखा.

पैया देखाड्यां पारना, अविचल भान उदे थयो ।
तिहां अगिया अवतारमां, अजवास इहां स्यो रह्यो ॥ ३८

इस निष्कलङ्क बुद्धावतारने सबको अखण्ड मुक्तिका मार्ग दिखा दिया. अखण्ड तारतम ज्ञानरूपी सूर्यका उदय हो चुका है. अब यहाँ पहलेके

अवतारोंका प्रकाश ही क्या रह गया ? अर्थात् सब निस्तेज हो गए हैं.

एणी पेरे तमे प्रीछजो, अवतार न थाए अन ।
पुरुष तां पेहेलो ना कह्यो, विचारी जुओ वचन ॥ ३९

हे सुन्दरसाथजी ! आप सब इस प्रकार समझें. अब दूसरा अवतार नहीं होगा. क्योंकि घोड़े पर सवार होनेवाले पुरुषके विषयमें पहले भी कुछ नहीं कहा गया था. इन वचनोंको विचारपूर्वक देखो.

रखे केहने धोखो रहे, आ जुआ कह्या अवतार ।
तो ए केहनी बुधे विस्नुने, जगवी पोहोंचाड्यो पार ॥ ४०

किसीको इन अवतारोंको समझनेमें शंका न रहे इसलिए मैंने अलग-अलग अवतारोंका वर्णन किया है, अन्यथा इन अवतारोंमेंसे किसीकी भी बुद्धिने विष्णु भगवानकी आत्माको जागृत कर पार तक पहुँचाया है ?

सुकजीए अवतार सहु कह्या, पण बुधमां रह्यो संदेह ।
एहनो चोख करी नव सक्यो, तो केम कहे लीला एह ॥ ४१

शुकदेवमुनिने अन्य सब अवतारोंका वर्णन किया किन्तु बुद्धावतारके विषयमें उन्हें भी सन्देह हुआ. जब वे इस स्वरूपका स्पष्ट निर्णय ही न कर सके तो इनकी (बुद्धावतारकी) लीलाका वर्णन कैसे कर सकते ?

ए तो अक्षरातीतनी, लीला अमारी जेह ।
पहेले संसा सहु भाजीने, वली कहीस कांईक तेह ॥ ४२

निष्कलङ्क अवतारकी लीला तो अक्षरातीत पूर्ण ब्रह्मकी लीला है. यह लीला हमारे अखण्ड घर-परमधाम की है. अब सर्वप्रथम अनेक ब्रह्मकी अवधारणाको दूर कर सबकी शङ्काएँ मिटा दूँ, फिर इस लीलाका थोड़ा-सा वर्णन करूँगी.

वेराटनी विध कही तमने, रखे राखो मन संदेह ।
अखंड गोकल ने प्रतिबिंब, वली कही प्रीछवुं तेह ॥ ४३

हे सुन्दरसाथजी ! मैंने तुम्हें वैराटका पूर्ण विवरण कहा, ताकि किसीके मनमें

किसी भी प्रकारकी शङ्का न रह जाए. अब अखण्ड गोकुल तथा प्रतिबिम्ब गोकुल लीलाका वर्णन कर समझा रही हूँ.

अजवास अखंड अम कने, नहीं अंतराय पाव रती ।
रास रमी गोकल आव्या, प्रतिबिंब लीला इहां थकी ॥ ४४

हमारे पास धामधनीके तारतम ज्ञानका अखण्ड प्रकाश है. उसमें रत्ती भर भी अन्तर नहीं है. रास रमणोपरान्त पुनः जब कालमायाका ब्रह्माण्ड रचा गया तो उस समय गोकुलमें रमण करनेवाली गोपियाँ (वेदऋचाएँ) प्रकटीं. यहींसे प्रतिबिम्ब लीला आरम्भ होती है.

तारतम सूरज प्रगट्यो, सकल थयो प्रकास ।
लागी सिखरो पाताल झलक्यो, फोडियो आकास ॥ ४५

तारतमरूपी सूर्यके प्रकट होने पर सर्वत्र प्रकाश फैल गया है. इस तेजोमय प्रकाशने पातालसे वैकुण्ठ तक सभीको प्रकाशित कर दिया है. यहाँ तक कि वह ब्रह्माण्डाकाशको भी फोड़ कर आगे निकल गया.

किरणां सघले कोलांभियो, गयुं वेराटनुं अग्यान ।
द्रढाव चोकस लोक चौदनो, उडाड्युं उनमान ॥ ४६

अखण्ड तारतम ज्ञानरूपी सूर्यकी किरणें सर्वत्र व्याप्त हो गईं हैं. परिणामतः संसारका अज्ञानान्धकार दूर हो गया. चौदह लोकोंके प्राणियोंके हृदयमें उपरोक्त तथ्य अंकित हो गया तथा इसने दुनियाँके जीवोंके ब्रह्म विषयक अनुमानको भी उड़ा दिया.

वली जोत झाली नव रहे, वचमां विना ठाम ।
अखंड मांहें पसरी, देखाड्यो व्रज विश्राम ॥ ४७

अब तारतमज्ञानकी ज्योति अपने अखण्ड स्थानके बिना बीचमें नहीं रुकेगी, उसका प्रकाश अखण्ड व्रज–रास तक फैल गया और उसने हमें विश्राम स्थान–अखण्ड व्रज दिखा दिया.

प्रकरण ७ चौपाई २४०

आ जुओ रे आ जुओ रे आ जुओ रे हो साथजी,।
गोकल लीला आपणी हो साथजी... टेक

विध सरवे कहुं विगते, व्रज वस्यो जेणी पेर ।
अग्यारे वरस लीला करी, रास रमीने आव्या घेर ॥ १

हे सुन्दरसाथजी ! आप इसे वारंवार ध्यान पूर्वक देखो. गोकुलकी सम्पूर्ण लीला हमारी है. इसलिए यह सम्पूर्ण वृत्तान्त आपको अच्छी प्रकार कह दूँ कि व्रज मण्डल जिस प्रकार बसा हुआ है, वहाँ श्रीकृष्णजीने ग्यारह वर्ष तक लीलाएँ की तथा उसके बाद अखण्ड रास लीला कर हम सब मूल घर परमधाममें पल भरके लिए आईं.

गोकल जमुना त्रट भलो, पुरा बेहेतालीस वास ।
पासे पुरो एक लगतो, ए लीला अखंड विलास ॥ २

गोकुल ग्राम तथा यमुनाजीका तट अत्यन्त रमणीय है. गोकुल ग्रामके भीतर बयालीस मोहल्ले हैं. पासमें ही एक मोहल्ला है जो अखण्ड लीला-विलासका स्थान है.

वास वस्ती वसे घाटी, त्रण खुणेना गाम ।
कांठे पुरो टींबा उपर, उपनंदनो ए ठाम ॥ ३

व्रजमण्डल सघन बस्तीमें बसा हुआ है तथा त्रिकोण ग्राम है. एक किनारे पर, छोटे-से पहाड़ पर एक ग्राम बसा है, इसे उपनन्दका निवासस्थान कहा गया है.

पुरा सहु बीजी गमां, वचे वाट धेननो सेर ।
इहां रमे वालो सकल मांहें, गोवालोने घेर ॥ ४

अन्य मोहल्ले दूसरी ओर हैं. दो मोहल्लोंके बीच गायोंके आवागमनका मार्ग है. हमारे प्रिय श्रीकृष्ण यहाँ पर ग्वाल-बालोंके घरमें सबके साथ प्रेम लीलाएँ करते हैं.

पुरो पटेल सादूलनो, बीजी ते गमां एह ।
वृषभानजी त्रीजी गमां, पुरो दीसे लांबो तेह ॥ ५

सादूल पटेल, जो इस गाँवके मुखिया हैं, का घर पूरे मोहल्ला जैसा है. वह दूसरी ओर है. तीसरी ओर वृषभानजी रहते हैं उनका यह मोहल्ला लम्बा दिखाई देता है.

नंदजीना पुरा सामी, दिस पूरव जमुना त्रट ।
छूटक छाया वनसपती, वृध आडी डालो वट ॥ ६

नन्दजीके मोहल्लेके सामने पूर्व दिशामें यमुनाजीका तट है. जहाँ भाँति-भाँतिके बाग-बगींचे तथा थोड़े-थोड़े अन्तर पर लगाए गए वृक्ष पृथक्-पृथक् छाया दे रहे हैं. बरगदके पेड़की टेढ़ी-मेढ़ी फैली हुई शाखाएँ अत्यन्त शोभायमान लगतीं हैं.

सकल वन सोहामणुं, सोभित जमुना किनार ।
अनेक रंगे वेलडी, फल सुगंध सीतल सार ॥ ७

इस गोकुल मण्डलका सम्पूर्ण वन अत्यन्त शोभायमान है तथा यमुनाजीका तट भी अत्यन्त सुन्दर है. यहाँ पर रङ्ग-बिरङ्गी लताएँ हैं तथा फल फूलोंकी सुगन्ध लेकर शीतल हवा मन्द-मन्द बह रही है.

नंदजीना पुरा पाखल, पुरा त्रण मामाओ तणां ।
ठाट वस्ती आथे पुरा, आप सूरा त्रणे जणां ॥ ८

नन्दजीके मोहल्लेके साथ-साथ श्रीकृष्णजीके तीन मामाओंके मोहल्ले हैं. इनका ठाट-बाट ऐश्वर्यपूर्ण है. पूरा मोहल्ला गो-धनसे भरा हुआ है. ये तीनों भी स्वयं वीर एवं साहसी हैं.

गांगो चांपो अने जेतो, ए मामा त्रणेनां नाम ।
दखिण दिस ने पछिम दिस, वीटी बेठा गाम ॥ ९

गाङ्गा, चाँपा और जेता ये तीनों श्रीकृष्णजीके मामाओंके नाम हैं. दक्षिण तथा पश्चिम दिशाओंसे गोकुल गाँवको घेर कर ये लोग वसे हुए हैं.

आठ मंदिर नंदजी तणां, मांडवे एक मंडाण ।
पाछल वाडा गौतणां, मांहें आथ सरवे जाण ॥ १०

नन्दबाबाके आठ मकान हैं. बीचमें सामनेकी ओर एक चौक है. पीछेके भागमें गोशाला है. उसमें गोधन और तत्सम्बधी सामग्रियाँ सर्व रूपसे परिपूर्ण हैं.

रेत झलके मांडवे, आगल दूध चूलो चरी ।
आइजी एणे ठामे बेसे, बेसे सखियो सहु घेरी ॥ ११

बीचके चौकमें रेत चमक रही है. आगेके भागमें दूध गरम करनेके लिए चारमुख वाला चूल्हा (चरि-चूल्हा) बनाया गया है. माता यशोदा यहाँ बैठतीं हैं, और उन्हें घेरकर सब सखियाँ भी बैठतीं हैं.

इहां मंदिर मोदी तेजपालनो, चरी चूला पास ।
कोईक दिन आवी रहे, एहनो मथुरा मांहें वास ॥ १२

इस चरि-चूल्हेके पास तेजपाल नामक मोदी (व्यापारी) का घर है. वह कभी-कभी व्यापार कार्य हेतु यहाँ आकर रहता है, वैसे तो उसका निवासस्थान मथुरामें है.

सरूप दस इहां आरोगे, पाक साक अनेक ।
भागवंतीबाई भली भांते, रसोई करे ववेक ॥ १३

नन्दबाबाके घरमें दस स्वरूप (परिवारजन) एकसाथ मिलकर पक्वान्न, शाक आदि विभिन्न प्रकारकी भोजन सामग्री आरोगते हैं. भागवन्ती बाई अच्छी तरह रसोई बनाती है.

लाडलो नंद जसोमती, रोहिणी बलभद्र बाल ।
पालक पुत्र कल्याणजी, तेहनो ते पुत्र गोपाल ॥ १४

बहेनो बंने जीवा रूपा, भेलीया रहे मोहोलान ।
अने बाई भागवंती, नारी घर कल्यान ॥ १५

उपर्युक्त दस परिवारजनोके नाम इस प्रकार हैं- लाड़ले श्रीकृष्णजी, नन्दबाबा, माता यशोदाजी, रोहिणीमाता एवं उनके पुत्र बलराम तथा गोद लिए हुए पुत्र कल्याणजी और उनका पुत्र गोपालजी. जीवा तथा रूपा दोनों बहनें तथा

कल्याणजीकी धर्मपत्नी भागवन्तीबाई, ये सब नन्दमहलमें एक साथ रहते हैं.

पुरो एक वृषभाननो, उतर दिस लगतो ।
पासे भाई भेलो लखमण, पुरो पूरण वस्तो ॥ १६

वृषभानजीका एक मोहल्ला नन्दजीके मोहल्लेकी उत्तर दिशामें है. उनके भाई लक्ष्मणजी भी पास ही रहते हैं. इस प्रकार यह मोहल्ला भी पूरी वस्तीसे भरा हुआ है.

सरूप साते भली भांते, आरोगे अंन पाक ।
कल्याणबाई रसोई करे, विध विध वघारे साक ॥ १७

वृषभानजीके परिवारके सातों सदस्य अनेक प्रकारके पक्वान्न तथा सब्जियाँ ग्रहण करते हैं. कल्याणबाई विभिन्न प्रकारकी सब्जियोंको छौंक कर रसोई तैयार करती है.

राधाबाई पिता वृषभानजी, प्रभावती बाई मात ।
नान्हों क्रस्न कल्याणजी, तेथी मोटो सिदामो भ्रात ॥ १८

उपर्युक्त परिवारके सात सदस्य इस प्रकार हैं– राधिकाजी, उनके पिता वृषभानजी एवं माता प्रभावतीबाई. राधाजीके छोटे भाई कृष्णजी तथा कल्याणजी एवं अग्रज श्रीदामा.

नार सिदामा तणी, तेहनी नणंद राधाबाई ।
जाणी सगाई स्यामनी, अंग धरे ते अति बडाई ॥ १९

श्रीदामाकी धर्मपत्नी कल्याणबाईकी ननद राधाजी हैं. श्रीकृष्णजीके साथ राधाजीकी सगाई हुई है, यह जानकर कल्याणबाई राधाजीको उठाकर गलेसे लगाती हुई उनकी प्रशंसा करती है.

मंदिर छे आगल मांडवे, चूले चढे दूध माट ।
राधाबाई खोले प्रभावती, लई बेसे ऊपर खाट ॥ २०

वृषभानजीके छः मकान हैं. जिनके अग्रभागमें आङ्गन है. यहाँ चूल्हे पर दूधके वर्तन रखकर दूध गरम किया जाता है. यहीं माता प्रभावतीजी राधाजीको

गोदमें लेकर खाट (माची) पर बैठती हैं.

राधाबाईनो विवाह कीधो, पण परण्यां नथी प्राणनाथ ।
मूल सनमंधे एक अंगे, विलसे वल्लभ साथ ॥ २१

श्रीकृष्णके साथ राधाजीका वाग्दान (सगाई) हुआ है. किन्तु प्राणनाथ श्रीकृष्णके साथ विधिपूर्वक विवाह नहीं हुआ है. राधाजी तथा श्रीकृष्णका मूल सम्बन्ध परमधाममें एकात्म स्वरूप होनेके कारण राधाजी अपने प्राणवल्लभ श्रीकृष्णजीके साथ लीला-विलास करती है.

घुरसे गोरस हरखे हेते, घर घर प्रते थाए ।
आंगणे वेलुं उजली, वालो विराजे सहु मांहे ॥ २२

आनन्द उल्लासके साथ प्रत्येक घरमें दहीका मन्थन होता है, और सदैव उत्साह पूर्वक विनोद लीलाएँ होतीं हैं. आँगनके अग्रभागमें सफेद रेत बिछी हुई है जहाँ श्रीकृष्णजी सबके साथ बैठते हैं.

पुरा सघले वचे चोरा, मांहें मेलावा थाय ।
चारे पोहोर गोठ घुघरी, रामत करतां जाय ॥ २३

सब मोहल्लोंके बीचमें बैठनेका एक चौक है. सभी हिल-मिलकर बैठते हैं. मेवा मिठाई तथा घुघरीका आहार लेते हुए चारों प्रहर हास्यविनोदमें समय बीत जाता है.

तेजपाल मोदी वलोट पूरे, व्रजमां मोटे ठाम ।
वस्त वसाणुं सहु लिए, घृत दिये आखुं गाम ॥ २४

मथुराका तेजपाल नामक व्यापारी व्रज मण्डलमें मुख्य स्थानों पर लेन-देन करता है. समस्त गोकुल गाँवके लोग उससे विभिन्न वस्तुएँ लेते हैं और उसे ही अपना घी देते हैं.

घोलिया इत घोल करवा, आवे व्रजमां जेह ।
वस्त वसाणुं लिए दिए, जै रहे मथुरा तेह ॥ २५

छोटे छोटे व्यापारी सिर पर टोकरी लेकर व्रज मण्डलमें व्यापार करने आते हैं तथा वस्तुओंका आदान-प्रदान कर मथुरा लौट जाते हैं.

गोवाला संग रमे वालो, सेर पाणी वाट ।
विनोद हांसे अमे आवुं जावुं, जल भरवा एणी घाट ॥ २६

गोप बालकोंके साथ श्रीकृष्णजी पानी भरनेके मार्गमें खेलते हैं. जब घाट पर हम पानी भरनेके लिए आती-जातीं हैं तो वे हमारे साथ हास्य विनोद करते हैं.

विलास व्रजमां वालाजीसुं, वरते छे एह वात ।
वचन अटपटा वेधे सहुने, अहेनिस एहज तात ॥ २७

व्रज मण्डलमें हम सब सखियाँ प्रियतम श्रीकृष्णके साथ आनन्द विनोद करतीं हैं. श्रीकृष्णके बाल सुलभ मधुर वचन हम सबके हृदयको स्पर्श करते हैं. इस प्रकार हम रात दिन प्रियतमके प्रेममें रंगी रहतीं हैं.

रमे प्रेमे प्रीते भीनो, पुरा सघला मांहे ।
रमे खिण जेसुं तेहने बीजो, सूझे नहीं कोई क्यांहे ॥ २८

पूरे मोहल्लेमें प्रियतम श्रीकृष्ण प्रेममें मग्न होकर सबके साथ खेलते रहते हैं. जिस किसीके साथ श्रीकृष्णजी एक क्षणके लिए भी खेलते हैं तो उसे श्रीकृष्णके अतिरिक्त और कुछ नहीं सूझता अर्थात् रात-दिन वह प्रेममें भावविभोर रहता है.

रामत रंगे अमे वालाजी संगे, रमुं जातां पाणी ।
आठो पोहोर अटकी अंगे, एह छब एह वाणी ॥ २९

हम जब यमुना जल भरनेके लिए जातीं हैं तो श्रीकृष्णके साथ आनन्दपूर्ण रामतें करतीं हैं. आठों प्रहर श्रीकृष्णकी छवि तथा उनकी मधुर वाणी पर हमारी चित्त वृत्ति लगी रहती है.

घर घर आनंद ओछव, उछरंग अंग न माय ।
विनोद हांस वालाजी संगे, अहेनिस करतां जाय ॥ ३०

इस प्रकार घर-घरमें आनन्द उत्सव होता रहता है जिससे हमारे अंगोंमें उत्साह एवं रोमाञ्चका सञ्चार होता है. प्रियतम श्रीकृष्णके साथ हास्य विनोद करते हुए हमारे रात-दिन आनन्दमें व्यतीत होते हैं.

बालक सुन्दर बोले मीठुं, केडे करी घेर आणुं ।
खिणमां जोवन प्रेमे पूरो, सेजडिए सुख माणुं ॥ ३१

श्रीकृष्णजीका बाल स्वरूप अति सुन्दर है. वे मधुर वचन बोलते हैं. हम उन्हें पीठ पर बैठा कर घरोंमें लाते हैं. क्षण भरमें वे यौवन प्राप्त करके पूर्ण प्रेम दिखाते हैं. इस प्रकार उनके साहचर्य द्वारा (हृदयरूपी शय्याके) सुखका अनुभव प्राप्त होता है.

वाछरडा लई वन वधारे, आठमे दसमे दिन ।
कहीं एक गोवरधन फरतां, मांहें रमे ते बारे वन ॥ ३२

जब श्रीकृष्णजी आठवें या दसवें दिन बछड़ोंको लेकर वनमें जाते हैं तो कभी कभी गोवर्धन पर्वत पर तथा उसके चारों ओर घूमते हैं. इस प्रकार व्रज मण्डलके बारहों वनोंमें लीलाएँ करते हैं.

अखंड लीला रमुं अहेनिस, अमे सखियो वालाजीने संग ।
पूरे मनोरथ अमतणां, ए सदा नवले रंग ॥ ३३

हम सब सखियाँ रात-दिन श्रीकृष्णजीके साथ अखण्ड लीला करतीं हैं. प्रियतम श्रीकृष्णजी सदैव नई नई लीलाओं द्वारा हमारी मनोकामनाएँ पूर्ण करते हैं.

श्रीराज पधार्‌या पछी, व्रजवधू मथुरा ना गई ।
कुमारका संग रामत मिसे, दाणलीला एम थई ॥ ३४

श्रीराजजी (श्रीकृष्णजी) जबसे व्रजमें आए तबसे व्रजवधू (गोपिकाएँ) दूध, दही बेचनेके लिए मथुरा नहीं गईं. कुमारिकाएँ (अक्षरकी सुरताकी सखियाँ) भी गोपियोंकी देखा देखी दूध दही बेचनेके बहाने क्रीड़ा करतीं थीं (उनका दूध दही लूटकर श्रीकृष्ण ग्वालोंको बाँट देते थे). इस प्रकार उनके साथ दानलीला हुई.

कुमारका रमे रामत, अभ्यास चीलो कुलतणो ।
कुलडा मांहें दूध दधी, रमे वन रंग रस घणो ॥ ३५

कुमारिकाएँ अपने कुलके परम्परागत अभ्यास अनुसार रमण करतीं हैं. छोटे-

छोटे पात्रों (कुल्हणों) में दूध दही लेकर अत्यन्त उत्साहके साथ वनमें खेलतीं हैं.

व्रजवधू मांहें रमवा, संग केटलीक जाय ।
वालोजी इहां दाण मिसे, मारग आडो थाय ॥ ३६

व्रज वधुओंके साथ कई कुमारिकाएँ भी खेलने जातीं हैं. श्रीकृष्णजी दानलीला (कर-वसूली) के बहाने गोपिकाओं तथा कुमारिकाओंका रास्ता रोक कर खड़े रहते हैं.

दूध दधी माखण लावुं, अमे वालाजीने काज ।
ते दधी झुंटी अमतणुं, दिए गोवालाने राज ॥ ३७

हस सब सखियाँ प्रियतम श्रीकृष्णके लिए ही दूध, दही तथा मक्खन लातीं हैं. उस दूध, दहीको हमसे छीन कर, स्वयं श्रीराजजी ग्वाल बालोंमें वितरित कर देते हैं.

गोवाला नासी जाय अलगां, अमे वलगी राखुं वालो पास ।
पछे एकांते अमे वालाजी संगे, करुं वनमां विलास ॥ ३८

दही और मक्खन लेकर ग्वाल बाल अलग हो जाते हैं और हम सब श्रीकृष्णके चरण कमलोंसे लिपट जातीं हैं. तदुपरान्त प्रियतमके साथ एकान्त वनमें हम सब प्रेमानन्दका अनुभव करतीं हैं.

त्यारे कुमारका अम संग रहेती, अमे वाला संगे रमती ।
कुमारकाओने प्रेम उतपन, मूल सनमंध इहां थकी ॥ ३९

जब हम प्रियतमके साथ खेलती थीं उस समय कुमारिका सखियाँ भी हमारे साथ रहती थीं. यहींसे ही कुमारिकाओंको श्रीकृष्णके साथ प्रेम उत्पन्न हुआ और उनका मूल सम्बन्ध यहीं (व्रज) से ही आरम्भ हुआ है.

अखंड लीला अहेनिस, नित नित नवले रंग ।
एणी जोते सहुए द्रढ थयुं, सखियो वालाजीने संग ॥ ४०

इस प्रकार व्रजमें रात-दिन, नित्य नए-नए रङ्गों (उत्साह) के साथ अखण्ड लीला होती रहती थी. इस प्रकार सभी सखियाँ सदैव श्रीकृष्णजीके साथ

रहती थीं. इस लीलाकी जानकारी तारतमकी ज्योतिसे सुदृढ़ (सुनिश्चित) हो गई है.

नंद जसोदा गोवाल गोपी, धेन वछ जमुना वन ।
पसु पंखी थावर जंगम, नित नित लीला नौतन ॥ ४१

नन्दजी, यशोदा माता, ग्वाल, गोपियाँ, गाय तथा बछड़े, जमुनाजीका किनारा, वन्य पशुपक्षी, चल-अचल इन सबके साथ श्रीकृष्ण दिन-प्रतिदिन नई नई लीलाएँ करते थे.

पुरे सघले रमुं अमे, अजवालिए लई ढोल ।
वालोजी इहां विनोद करे, ते कह्या न जाय बोल ॥ ४२

हम सब सखियाँ शुक्ल पक्षकी उज्ज्वल चाँदनी रातमें ढोल लेकर पूरे मोहल्लेमें खेलती थीं. प्रियतम श्रीकृष्ण हमारे साथ यहाँ आनन्द-विनोद किया करते थे. वाणीके द्वारा इस लीलाका वर्णन नहीं हो सकता है.

उलसे गोकल गाम आखुं, हरख हेत अपार ।
धन धान वस्तर भूषण, द्रव्ये अखूट भंडार ॥ ४३

समस्त गोकुल गाँव उत्साहसे भरा हुआ है. प्रसन्नता एवं प्यारकी कोई सीमा नहीं है. यहाँ अन्न, वस्त्राभूषण आदि सम्पत्तिके अनन्त भण्डार भरे हैं.

विवाह जनम नित प्रते, आखे गाम अनेक होय ।
थोडुंक कारज कांईक थाय, तिहां तेडावे सहु कोय ॥ ४४

पूरे गाँवमें नित्य प्रति विवाह-जन्मके अनेक उत्सव हुआ करते हैं. किसीके घर यदि किसीभी प्रकारका शुभ अवसर हो तो वहाँ सबको आमन्त्रित किया जाता है.

अनेक वाजंत्र नाटारंभ, धन खरचे अहीर उमंग ।
साथ सहु सिणगार करी, अमे आवुं ते अति उछरंग ॥ ४५

अनेक प्रकारके बाद्य यन्त्रोंको बजा कर, नाटक (नृत्य) आदि होते हैं. सब अहीर (यादव) उत्साहके साथ धन खर्च करते हैं. ऐसे अवसर पर हम सब सखियाँ शृङ्गारसे सुसज्जित होकर अति उत्साहके साथ आतीं हैं.

वलगे वालो विनोदे अमसुं देखतां सहु जन ।
पण विचारे नहीं कोई वांकुं, सहु कहे एह निसन ॥ ४६

प्रियतम श्रीकृष्ण विनोद करते हुए सबके देखते-देखते हमारे गले लग जाते थे. इससे किसीके भी मनमें कोई अनर्गल विचार नहीं उठते. सब यही कहते थे कि यह तो छोटा बालक है.

वात एहनी जाणुं अमे, कां वली जाणे अमारी एह ।
मांहेली वात न समझे बीजो, वालाजीनो सनेह ॥ ४७

प्रियतमकी इन आन्तरिक बातोंको या तो हम सब सखियाँ जानतीं हैं या वे स्वयं जानते हैं. प्रियतमके स्नेहकी आन्तरिक बातें अन्य लोग नहीं समझ पाते.

ए थाए सहु अम कारणे, वालो पूरे मनोरथ मन ।
ए समेनी हुं सी कहुं, साथ सर्वे धन धन ॥ ४८

व्रजमण्डलकी ये सभी लीलाएँ हम सब सखियों (ब्रह्मात्माओं) के लिए ही होतीं हैं. श्रीकृष्णजी हमारे मनोरथ पूर्ण करते हैं. मैं इस समयके आनन्दकी बातें क्या कहूँ ? समस्त सुन्दरसाथ धन्य हो जाते हैं.

गोकल आखुं कीधुं गेहलुं, अने वालो तो वचिखण ।
जिहां मलुं तिहां एहज वातो, हांस विनोद रमण ॥ ४९

श्रीकृष्णजीने समस्त गोकुल गाँवको अपने प्रेमानन्दसे पागल (दीवाना) बना दिया है और वे स्वयं तो बहुत ही चतुर (प्रवीण) हैं. हम सब जहाँ कहीं भी मिलतीं हैं वहाँ उनकी ही बातें करतीं हैं. हास्य-विनोद तथा रमणकी ही बातें होती रहतीं हैं.

हवे ए लीला कहुं केटली, अलेखे अति सुख ।
वरस अग्यारे वासनाओसुं, प्रेमे रम्या सनमुख ॥ ५०

अब मैं इन लीलाओंका वर्णन कहाँ तक करूँ ? ये तो असीम तथा अति सुखदायक हैं. इस प्रकार ग्यारह वर्षों तक श्रीकृष्णजीने व्रज मण्डलमें ब्रह्मात्माओंकी सुरतारूपी सखियोंके साथ प्रेमानन्दकी लीलाएँ की.

एक दिन गौ चारवा, वालो पोहोंता ते वृन्दावन ।
गोवाला गौ लई वल्यां, पछे जोगमाया उतपन ॥ ५१

एक दिन श्रीकृष्णजी गायें चरानेके लिए वृन्दावन पहुँचे. सायँकाल ग्वाल-बाल गायोंको ले कर लौट आए. पश्चात् श्रीकृष्णजीने योगमाया (रास-मण्डल) को उत्पन्न किया.

कालमायामां रामत, एटला लगे प्रमाण ।
ब्रह्मांडनो कलपांत करी, अखंड कीधो निरवाण ॥ ५२

कालमायाके ब्रह्माण्डमें यहीं तककी लीलाएँ हुईं. कालमायाके इस ब्रह्माण्डको कल्पान्त कर निश्चित रूपसे अखण्ड बना दिया.

सदा लीला जे व्रजनी, आ विध कही तेह तणी ।
हवे रासनो प्रकास कहुं, ए सोभा अति घणी ॥ ५३

मैंने इस प्रकार व्रज मण्डलमें निरन्तर चलनेवाली अखण्ड लीलाओंका वर्णन किया है. अब वृन्दावनमें हुई रासलीलाको संक्षिप्तरूपसे प्रकाशित करती हूँ. जिसकी शोभा अपरिमित है.

वली जोत झाली नव रहे, बीजो वेधियो आकास ।
ततखिण लीधो त्रीजो ब्रह्मांड, जिहां अखंड रजनी रास ॥ ५४

अब यह तारतमकी ज्योति इस ब्रह्माण्डमें नहीं समा सकेगी. वह यहाँसे आकाश मण्डल (व्रज) को वेध कर तत्काल आगे योगमायाके ब्रह्माण्डमें पहुँच गई, जहाँ रात्रिके समय अखण्ड रास लीला सम्पन्न हुई.

जिनस जुगत कहुं केटली, अलेखे सुख अखंड ।
जोगमायाए नवो निपायो, कोई सुख सरूपी ब्रह्मांड ॥ ५५

योगमायाके ब्रह्माण्ड (रासमण्डल) की सामग्रीका कहाँ तक वर्णन करूँ ? यहाँके सुख तो असंख्य हैं. योगमायाने अपनी शक्तिसे अखण्ड सुखस्वरूपी कोई नया ही ब्रह्माण्ड बनाया है.

मारा सुंदर साथ आधार, जीवन सखी वाणी ते एह विचारोजी ।
जागणीसुं जगवुं तमने, ते साथजी कां न संभारोजी ॥१

हे मेरे प्राणाधार सुन्दरसाथजी ! इस वाणी पर अच्छी तरह विचार करो. इस जागनीके ब्रह्माण्डमें मैं तुम्हें तारतम ज्ञान द्वारा जागृत कर रही हूँ. उस मूल सम्बन्धको क्यों याद नहीं करते ?

वाणी मांहें न आवे केमे, जोगमायानी विधजी ।
तोहे वचन कहुं तमने, लीला अमारी निधजी ॥ २

योगमाया रचित रास मण्डलका वर्णन वाणी द्वारा किसी भी प्रकार नहीं हो सकता, वह शब्दातीत है फिर भी यह लीला हमारे अखण्ड घर परमधामकी धरोहर है, इसलिए बता रही हूँ.

अमे जोऊं व्रंदावन इहां थकी, रमुं वालाजी साथजी ।
करुं ते रामत नित नवी, वन मांहें विलासजी ॥ ३

तारतम ज्ञानके द्वारा हम सब यहींसे वृन्दावनको देख रहे हैं, और प्रियतमके साथ लीलाएँ कर रहे हैं, तथा प्रत्येक दिन नई नई रामतें करते हुए वृन्दावनमें विलास कर रहे हैं.

जोगमायानी क्यांहे न दीसे, अम विना ओलखाणजी ।
वासना पांचे अक्षरनी, भले कहावे आप सुजाणजी ॥ ४

योगमायाके ब्रह्माण्डकी पहचान हमारे बिना अन्य कोई नहीं कर सकता. भला अक्षर ब्रह्मकी पञ्च वासनाएँ (शुकदेव, सनकादिक, शिवजी, भगवान विष्णु, कबीर) सर्व प्रकारसे प्रवीण (जानकार) क्यों न कहलाती हों.

ए मायाओ अमतणी, एहना अमकने विचारजी ।
बीजा सहुए एहना उपाएल, ए अमारी अग्याकारजी ॥ ५

ये दोनों माया (कालमाया एवं योगमाया) हमारे लिए हैं इसलिए उनकी जानकारी हमारे पास ही है. अन्य सभी संसारी जीव इन दोनोंसे ही उत्पन्न हुए हैं, परन्तु ये दोनों हमारे अधीन (आज्ञाकारी) हैं.

पहेले फेरे रास रामतडी, जे कीधी वृंदावनजी ।
आनंदकारी जोगमाया, अविनासी उतपनजी ॥ ६

प्रथम अवतरण (व्रज–रास) के समय वृन्दावनमें हुई रासकी रामतें एवं आनन्ददायी योगमाया सबके सब अविनाशी तत्त्वसे ही उत्पन्न हुई हैं.

जोगमायानी जुगत एहवी, एक रस एक रंगजी ।
एक संगे रहेवुं सदा, अंगना एकै अंगजी ॥ ७

योगमायाकी युक्ति ही ऐसी है कि उसमे सब एक ही रङ्ग तथा एक ही रस हैं (श्रीकृष्ण एवं सखियाँ सब प्रेमानन्द स्वरूप हैं). सबको एक साथ ही रहना है तथा हम सब एक श्रीराजजीकी ही अङ्गनाएँ हैं.

आतम सदीवे एक छे, वासना एकै अंगजी ।
मूल आवेस जोगमाया पर, सुख अखंडनां रंगजी ॥ ८

हम सभीकी आत्मा सदैव एक ही है. उसी प्रकार वासना भी एक ही अङ्गकी है. श्रीराजजीका मूल आवेश योगमायामें अवतरित हुआ है. अतः हम सब अखण्ड सुखोंके रङ्गमें रंगी हुई हैं.

एक अंगे रंगे संगे, तो अंतरध्यान थाय केमजी ।
ए सबदमां छे आंकडी, ते करी दऊं सरवे गमजी ॥ ९

इसमें यह आशङ्का रहती है कि जब हम सबका एक ही अङ्ग एक ही रङ्ग है, तथा एक ही संग है, तो रास लीलाके प्रेमानन्दमें श्रीकृष्णजी अन्तर्धान क्यों हो गए ? इस प्रसंगमें एक रहस्य है. मैं उसे सबके लिए सुगम बना दूँ.

आंकडी अंतरध्याननी, साथ तमने कहुं सनंधजी ।
अम विना ए कोण जाणे, तारतमनां बंधजी ॥ १०

हे सुन्दरसाथजी ! मैं अन्तर्धान होनेका गूढ़ रहस्य कह रही हूँ. इस रहस्यको हम सुन्दरसाथके बिना अन्य कौन जान सकता है ? यह तो तारतमकी मर्यादाका गूढ़ भेद है.

आवेस लइने जगविया, त्यारे पाम्या अंतरध्यानजी ।
विलास व्रह चित चोकस करवा, संभारवा घर श्री धामजी ॥ ११

मूल स्वरूप अक्षरातीत धनीने रास करते हुए जब अपना आवेश खींच लिया, तब अक्षरब्रह्म अपने धाममें जागृत हुए और इधर आवेश स्वरूप श्रीकृष्ण अन्तर्धान हो गए. विरह और मिलन द्वारा सखियोंके हृदयमें दुःख सुखका अनुभव अंकित करनेके लिए, अर्थात् अक्षरके हृदयमें विलास लीला सुनिश्चित करनेके लिए एवं अखण्ड घर परमधामकी याद दिलानेके लिए वे अन्तर्धान हुए हैं.

जुगत जोगमाया तणी, बीजो न जाणे कोयजी ।
बीजो कोई तो जाणे, जो अम विना कोई होयजी ॥ १२

अखण्ड योगमायाके इस रहस्यको दूसरा कोई नहीं जान सकता. यदि वहाँ हम-ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई होता तभी तो दूसरा कोई जान सकता (ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त वहाँ और कोई भी नहीं था).

जोगमायाए जाग्रत थाय, जल भोम वाय अगिनजी ।
पसु पंखी थावर जंगम, तत्व पांचे चेतनजी ॥ १३

योगमायाकी कृपासे ही वहाँके प्रत्येक पदार्थमें जागृति (चेतना) पैदा हुई. इसलिए पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, पशु पक्षी, स्थिर, चर (स्थावर-जंगम) तथा पाँचों तत्व सभी चेतन हैं.

सुतेज ससी वन पसु पंखी, तत्व पांचे सुतेजजी ।
सुतेज सरवे जोगवाई, सुतेज रेजारेजजी ॥ १४

चन्द्रमा, वन, पशुपक्षी ये सब स्वयं प्रकाशमान हैं, पाँचों तत्त्व भी स्वंय प्रकाशयुक्त हैं. समस्त साधन सामग्रियाँ प्रकाशमान हैं, यहाँ तक कि वृन्दावनकी रेतके कण भी योगमायाके प्रभाव द्वारा सुन्दर तेजोमय तथा स्वयं प्रकाशित हैं.

हेम जवेरनां वन कहुं, तो ए पण खोटी वस्तजी ।
सत वस्तने समान नहीं, न कहेवाय मुख न हस्तजी ॥ १५

ये वन सोने एवं जवाहरातके हैं, ऐसा कहें तो भी ये (सोना आदि) तो झूठी वस्तुएँ हैं. योगमायाकी सत्य सामग्रियोंके समान ये कदापि नहीं हो सकतीं.

इसलिए इनकी शोभाका वर्णन न तो मुखसे हो सकता है और न ही हाथके संकेतों द्वारा इनकी उपमा दी जा सकती है.

एक पत्रनी वरणव सोभा, आणी जिभ्याए कही न जायजी ।
कै कोट ससी जो सूर कहुं, तो एक पत्र हेठे ढंकायजी ॥ १६

यहाँके वृक्षके एक पत्तेकी शोभाका वर्णन भी इस झूठी जिह्वा द्वारा नहीं हो सकता. क्योंकि इस संसारके करोड़ों सूर्य और चन्द्रमाका यावत् प्रकाश एकत्रित करूँ तो भी वह सब एक पत्तेके प्रकाशमें ढँक जाता है अर्थात् एक पत्तेके सामने करोड़ों सूर्य चन्द्र भी निस्तेज हो जाते हैं.

ए भोमनी रेत रंचकने, समान नहीं सूर कोटजी ।
द्रष्टे कांई आवे नहीं, एक रंचक केरी ओटजी ॥ १७

इस योगमायाके मण्डलके रेतके एक कणके प्रकाशके सामने संसारके करोड़ों सूर्यका तेज भी स्पर्धा नहीं कर सकता. यहाँ तक कि रेतके एक कणके प्रकाशके समक्ष संसारके सूर्यका प्रकाश तो दिखाई भी नहीं देता.

हवे ते भोमनां वस्तर भूषण, वचने केम कहुं मुखजी ।
मारा घरनी हसे ते जाणसे, अम घरतणां ए सुखजी ॥ १८

वाणी के द्वारा अब मैं इस भूमिकाके वस्त्रों तथा आभूषणोंका वर्णन किस प्रकार करूँ ? मेरे घर अखण्ड परमधामके मूल सम्बन्धी ही इसे जान पाएँगे, क्योंकि ये सब सुख हमारे मूल घर परमधामके हैं.

सुंदरता सणगार सोभा, वचने ना कहेवायजी ।
तो सरूपनां जे सुखनी वातो, लवो केम बोलायजी ॥ १९

उस दिव्य भूमिके शृङ्गारकी शोभा (सुन्दरता) का वर्णन वाणी द्वारा नहीं हो सकता, तो मूल स्वरूप श्रीकृष्ण परमात्माके सुख (अखण्ड प्रेमानन्द) का अंशमात्र भी वाणीके द्वारा कैसे व्यक्त किया जा सकता है.

भोमनी किरणो वननी किरणो, किरणां ससी प्रकासजी ।
ते माहें अमे रमुं प्रेमे, पीउसुं रंग विलासजी ॥ २०

अखण्ड वृन्दावनकी भूमिका तेज, वनका सौन्दर्य तथा चन्द्रमाकी किरणोंका

शीतल प्रकाश अनुपम हैं, ऐसे वृन्दावनमें हम सब सखियाँ प्रियतम श्रीकृष्णके साथ आनन्द विलास करती हुई प्रेम पूर्वक खेलतीं हैं.

ए रामत रास रमी करी, अमे आव्या सहु घर धामजी ।
ब्रह्मांडनो कलपांत करी, रुदे कीधो अखंड ठामजी ॥ २१

रासकी ऐसी लीलाएँ सम्पन्न कर हम सब ब्रह्मात्माएँ पल मात्रके लिए अखण्ड घर परमधाममें जागीं. योगमायाके ब्रह्माण्डका कल्पान्त कर अक्षर ब्रह्मने रास लीलाको अपने हृदयमें अखण्ड कर लिया.

अमे अमारे धाम आव्या, अक्षर पोताने घेरजी ।
अखंड रजनी रास रमाए, रामत एणी पेरजी ॥ २२

हम सब ब्रह्मसृष्टि अपने घर परमधाममें जाग गईं तथा अक्षरब्रह्म अपने घर अक्षरधाममें जाग गए. इस प्रकार अक्षरातीत श्रीकृष्णजीने रासकी अखण्ड रात्रिमें हम सबको रास-रमण करवाया.

व्रज रास मांहें अमे रमुं, आहीं पण अमे आव्याजी ।
श्री धाम मधे बेठा अमे, जोऊं छुं आ मायाजी ॥ २३

व्रज (कालमायाका ब्रह्माण्ड) तथा रास (योगमायाका ब्रह्माण्ड) में हम सब ब्रह्मात्माएँ खेल रहीं हैं तथा जागनीके इस तीसरे ब्रह्माण्डमें भी हम सब आई हैं. वस्तुतः परमधाममें बैठे-बैठे हम यह प्रकृतिजन्य खेल देख रहीं हैं.

व्रज रास देखाडिया, रमिया ते अनेक पेरजी ।
विलास व्रह बंने भोगवी, आव्या ते आपणे घेरजी ॥ २४

धामधनीने व्रज तथा रासके दर्शन कराए एवं हम सबने मिलकर अलग-अलग प्रकारकी लीलाएँ भी कीं. विलास तथा विरह द्वारा सुख-दुःख दोनोंका अनुभव कर हम सब अपने घर परमधाम चले आए.

सुख दुख बंने जोईया, तोहे कांईक रह्यो संदेहजी ।
ते माटे वली सत सरूपे, मंडल रचियो एहजी ॥ २५

हम सबने सुख-दुःख दोनोंका अनुभव किया तथापि तामसी सखियोंकी दुःख देखनेकी इच्छा अधूरी रह गई. इसलिए अक्षरब्रह्म (सत्स्वरूप) ने

श्रीराजजीकी प्रेरणासे पुनः कालमायाके इस तीसरे ब्रह्माण्डकी रचना की.

ए रामत रची अम कारणे, अमे कारज एणे आव्याजी ।
बंनेना मनोरथ पूरवा, अमे रचावी आ मायाजी ॥ २६

यह खेल (तीसरा ब्रह्माण्ड-जागनी रास) हम सबके लिए ही रचा गया है. हमारे लिए ही तारतम लेकर श्रीकृष्ण (श्रीराजजी) स्वयं सद्गुरुके हृदयमें यहाँ पधारे. ब्रह्मात्माओं तथा अक्षरब्रह्म दोनोंकी इच्छा पूर्ण करनेके लिए इस मायावी ब्रह्माण्डकी रचना हुई.

संसार रची सुपनना, देखाड्या मांहे सुपनजी ।
ते जोऊं अमे अलगां रही, नहीं जोवावालो कोई अनजी ॥ २७

अक्षर ब्रह्मकी मूल-प्रकृतिने यह स्वप्नका ब्रह्माण्ड बनाया. श्रीराजजीने ब्रह्मात्माओंको मूल मिलावेमें बैठाकर यह स्वप्न दिखाया. इसे हम ब्रह्मप्रियाएँ संसारसे अलग परमधाममें बैठकर देख रहीं हैं. इस प्रकार इसे देखने वाला भी कोई अन्य नहीं है (हम ही है).

रामत साथने रूडी पेरे, देखाडी भली भांतजी ।
तारतम बुध प्रकासीने, पूरी ते मननी खांतजी ॥ २८

श्रीराजजीने सुन्दरसाथको यह खेल (मायावी संसार) अच्छी तरह दिखाया तथा बुद्धजीने तारतम ज्ञानका प्रकाश देकर सब (सुन्दरसाथ) की मनोकामनाएँ पूर्ण कर दी.

रामत अमे जे जोई, ते थिर थासे निरधारजी ।
सहु मांहे सिरोमण, अखंड ए संसारजी ॥ २९

हम ब्रह्मात्माओंने व्रज, रास तथा जागनीमें इस संसारके जितने खेल (सुरता द्वारा) देखे वे सब निश्चित रूपसे अखण्ड हो जाएँगे. सभी ब्रह्माण्डोंमें यह जागनीका ब्रह्माण्ड सर्वश्रेष्ठ होगा.

भगवानजी आहीं आविया, जागवाने ततपरजी ।
अमे जागसुं सहु एकठां, ज्यारे जासुं अमारे घेरजी ॥ ३०

अक्षरब्रह्म यहाँ आए हैं. वे भी जागृत होनेके लिए तत्पर हैं. तब हम सब (ब्रह्मात्माएँ एवं अक्षर ब्रह्म) एक साथ जागृत होंगे और अपने-अपने घर चले जाएँगे.

हो वालैया हवे ने हवे, दसो दिस तारी दया ।
ए गुण तारा केम विसरे, मुझथी अखंड ब्रह्मांड थया ॥ १

इन्द्रावती कहती है, हे प्रियतम सद्गुरु ! अब तो दसों दिशाओंमें आपकी ही दया दृष्टि दिखाई देती है. आपका यह उपकार कैसे भुलाया जा सकता है ? आपकी दया मात्रसे ही मेरे द्वारा ब्रह्माण्ड अखण्ड हो गया.

हवे तो गली हुं दया मांहें, सागर सरूपी खीर ।
दया सागर सकल पूरण, एक टीपुं नहीं मांहें नीर ॥ २

अब तो मैं आपके दयासागरमें गलित हो गई हूँ, क्योंकि आपकी दयाका सागर क्षीरसागरके समान है अर्थात् दूध जैसा स्वच्छ और मधुर है तथा पूर्णरूपेण भरा हुआ है. इसमें मायारूपी जलकी एक बूँद भी नहीं है.

दया मुकट सिर छत्र चमर, दया सिंघासन पाट ।
दया सरवे अंग पूरण, सहु दया तणो ए ठाट ॥ ३

आपकी दयासे मस्तक पर मुकुट, छत्र तथा चँवर आदि लहरा रहे हैं, तथा आपकी ही दयासे सिंहासन तथा गद्दी प्राप्त हुई हैं. आपकी करुणा मेरे अङ्ग-प्रत्यङ्गमें भरी हुई है. यह ठाट-बाट सब आपकी दयाका ही परिणाम है.

हवे दया गुण हुं तो कहुं, जो अंतर कांई होय ।
अंतर टाली एक कीधी, ते देखे साथ सहु कोय ॥ ४

हे धनीजी ! मैं आपकी दयाके गुणोंका तभी वर्णन कर सकती हूँ जब आपमें और मुझमें कोई अन्तर हो. आपने मायाका भेद मिटाकर मुझे अपने समान कर दिया है. इसे सब सुन्दरसाथ देख रहे हैं.

पल पल आवे पसरती, न लाभे दयानो पार ।
बीजुं ते सहु में मापियुं, आगल रही आ वार ॥ ५

आपकी दया अब क्षण प्रतिक्षण विस्तृत हो रही है. इसलिए इसका पार पाया नहीं जा सकता. अन्य सब लक्षणों (क्षमा, शील, सन्तोष आदि) को मैंने तौला. इस समय आपकी दया सबसे आगे है.

आटला ते दिन अमे घर मधे, लीला ते राखी गोप ।
हवे बुध ताणे पोते घर भणी, तेणे प्रगट थाए सत जोत ॥ ६

इतने दिन तक तो हमने अपने घरमें अर्थात् ब्रह्मात्माओंमें ही तारतमका प्रकाश छिपाए रखा. अब अक्षरकी बुद्धि उसे अपनी ओर खींच रही है. इससे समस्त संसारमें सतका प्रकाश प्रकट होगा.

सबद कोई कोई सत उठे, तेणे केम करुं हुं लोप ।
गोप सरवे सत थयुं, असत थयुं उदोत ॥ ७

शास्त्र-पुराणोंके कई शब्द सत्यका सङ्केत करते हैं, उन शब्दोंको मैं कैसे लुप्त होने दूँ. आज तक सत्य वस्तु गुप्त रही थी, तथा असत्य मायाका ही प्रसार हो रहा था.

हवे असतने अलगो करुं, केम थावा दऊं सत लोप ।
सत असत भेलां थयां, तेमां प्रकासुं सत जोत ॥ ८

अब मैं असत्य (अनित्य वस्तु) को अलग कर रही हूँ. सत् (अखण्ड वस्तु) को अदृश्य क्यों होने दूँ ? सत् वस्तु (ब्रह्म) तथा असत् वस्तु (माया) आज तक इस संसारमें मिश्रित हो गई थी. इसमेंसे मैं सत् वस्तुकी ज्योतिका प्रकाश कर दूँ.

असत पण करवुं अखंड, करी सतनो प्रकास ।
सनंध सतनी समझावी, अंधेरनो करुं नास ॥ ९

अखण्ड तारतमकी ज्योतिका प्रकाश दिखा कर अनित्य संसारी जीवोंको भी अखण्ड मुक्तिका सुख देना है. सत्यका वृत्तान्त समझा कर अज्ञानरूप अन्धकारको दूर कर देना है.

संसा ते सहु संघारियां, असत भागी अंधेर ।
निज बुध उठी बेठी थई, भाग्यो ते अवलो फेर ॥ १०

सद्गुरुने मेरे सभी सन्देहोंका संहार किया अर्थात् मेरी सब शंकाओंका समाधान हो गया है. असत्य (अन्धकार) माया भाग गई. अब अक्षरकी मूल बुद्धि जागृत हुई है. अतः मायाका उलटा चक्र (जन्म-मरण) मिट गया है.

हवे फेर सहु सवलो फरे, सहुने सत आव्यु द्रष्ट ।
एणे प्रकासे सहु प्रगट कीधुं, जाणी सुपन केरी सृष्ट ॥ ११

अब सब कोई सीधे परमधामकी ओर उन्मुख होंगे. सबको सत्य दृष्टिगोचर होने लगा. तारतमके इस प्रकाशने सभी अखण्ड वस्तुओंको प्रत्यक्ष प्रकट कर दिया, और इस मायावी सृष्टिको स्वप्न समान बना दिया है.

रामत जोई कालमायानी, कालमायाने आसरी ।
देखी सुख आ जागणी, जासे ते सरवे विसरी ॥ १

व्रज मण्डलमें हम सबने कालमायाका आश्रय लेकर कालमायाका खेल देखा. अब इस तीसरे ब्रह्माण्डमें जागनीका सुख देखकर (आत्म-जागृति द्वारा) हम अन्य सब कुछ भूल जाएँगी.

आवेस मुं कने धणी तणो, तेणे करुं भेलो साथ ।
साथ मली सहु एकठो, विनोद थासे विलास ॥ १३

धामधनीकी आवेश (ज्ञानरूपी) शक्ति मेरे पास है. इसके द्वारा मैं समस्त सुन्दरसाथको एकत्रित करूँगी. हम सब सुन्दरसाथके एकत्रित होने पर आनन्द मंगल तथा विनोद विलास होगा.

विलास करी विध विधनां, त्यारे थासे हरख अपार ।
रामत करसुं आनन्दसुं, आवसे सकुंडल सकुमार ॥ १४

जागनीके ब्रह्माण्डमें विभिन्न प्रकारके परमधामके सुख एवं आनन्दका अनुभव कर समस्त सुन्दरसाथको अत्यन्त प्रसन्नता होगी. सब मिलकर आनन्द पूर्वक जागनीलीला करेंगे. इसी खेलमें साकुण्डल तथा साकुमार सखियाँ भी आकर सम्मिलित होंगी.

त्यारे साथ सहु आवी रहेसे, रामत थासे रंग ।
त्यारे प्रगट थासुं पाधरा, पछे उलटसे ब्रह्मांड ॥ १५

सभी सुन्दरसाथ एकत्रित होंगे और आनन्द विनोदकी लीलाएँ होंगी. तब हम सब प्रकट होंगे (इस लीलाका सर्वत्र प्रसार होगा). उस समय ब्रह्माण्डके प्राणी उत्साह पूर्वक हमारे पास दौड़ते हुए आएँगे.

मारा आवेस मांहेंथी भाग दऊं, साथने सारी पेर ।
मननां मनोरथ पूरा करी, हरखे ते जगवुं घेर ॥ १६

मेरी इच्छा है कि धामधनी द्वारा मुझे प्राप्त आवेश (ज्ञान) में से कुछ अंश मैं परमधामके सुन्दरसाथको अच्छी तरह दूँ. उनकी मनोकामनाएँ पूर्ण कर उन्हें आनन्दपूर्वक मूल घर-परमधाममें जागृत करूँ.

साथ न मूकुं अलगो, साथ मुने मूके केम ।
कह्युं मारुं साथ न लोपे, साथ कहे करुं हुं तेम ॥ १७

मैं सुन्दरसाथको संसारमें अकेले (अलग) नहीं छोड़ूँगी तो सुन्दरसाथ मुझे कैसे छोड़ेंगे ? मेरी बातको सुन्दरसाथ नहीं टालेंगे और मैं भी सुन्दरसाथ जैसा कहेंगे वैसा ही करूँगी.

लेस छे कालमायानो, वासनाओ मांहें विकार ।
दया द्रष्टे गाली रस करुं, मेली तारतमनो खार ॥ १८

हमारे सुन्दरसाथ पर कालमायाके ब्रह्माण्डकी अज्ञानताके विकारोंका थोड़ा प्रभाव है, उसे मैं धामधनीकी दया दृष्टि द्वारा तारतमरूपी क्षार मिला कर गला दूँगी तथा एक रस कर दूँगी.

विकार काढुं विधोगते, करी दयानो विस्तार ।
भली भांते भाजुं भरमना, जेम आल न आवे आकार ॥ १९

धनीजीकी दयाका विस्तार कर सुन्दरसाथके हृदयके विकारोंको निर्मूल कर दूँगी. इस प्रकार अज्ञानता (अविद्या) तथा भ्रमको अच्छी तरह मिटा दूँगी ताकि परमधामकी ओर उन्मुख होनेमें आलस्यका अनुभव न हो.

सत वस्त दऊं साथने, कोई रची रूडो रंग ।
मननां मनोरथ पूरा करी, सुख दऊं सरवा अंग ॥ २०

मेरी इच्छा है कि अच्छा ढँग अपनाकर सुन्दरसाथको सत्य वस्तु (अखण्ड परमधामका तारतम ज्ञान) प्रदान करूँ. इस प्रकार उनकी मनोकामनाएँ पूर्ण करके उन अङ्ग-प्रत्यङ्गोंमें अखण्ड सुखोंका संचार कर दूँ.

कालमायानो लेस निद्रा, अने निद्रा मूल विकार ।
सरवा अंगे सुध थाय, करी दऊं तेह विचार ॥ २१

कालमायाका लेशमात्र अंश ही निद्रा (अज्ञान) है, और निद्रा ही मूल विकार है. अतः सुन्दरसाथके सब अंगों (हृदय) में ज्ञान जागृत हो जाए, ऐसी विचारधारामें उन्हें मग्न कर दूँ.

जुगते जां न जगवुं तमने, तो जोगमाया केम थाय ।
निरमल वासना कीधा विना, रासमां ते केम रमाय ॥ २२

यदि मैं युक्ति पूर्वक तुम्हें जागृत न करूँ तो योगमाया (माया और ब्रह्मका परिचय) किस प्रकार हो, क्योंकि सुन्दरसाथकी वासना पवित्र किए बिना जागनी रास मण्डलमें कैसे रमण हो पाएगा ?

क्रोधनां कटका करुं, उडाडी अलगो नाखुं ।
साथ मांहें ना दऊं पेसवा, निद्रा ते आडी राखुं ॥ २३

हे सुन्दरसाथजी ! मैं अखण्ड तारतम ज्ञान द्वारा काम, क्रोध आदि मायावी विकारोंको, टुकड़े-टुकड़े कर उन्हें ब्रह्मात्माओंके मार्गसे दूर कर देना चाहती हूँ. इन विकारोंको सुन्दरसाथके हृदयमें प्रवेश होने नहीं दूँगी, तथा उनको इस अज्ञानरूपी निद्रासे अलग ही रखूँगी.

आमला अवला अति घणां, कालमायाना छे जोर ।
वांकचूक विसमा टालीने, करी दऊं ते पाधरा दोर ॥ २४

इस कालमायामें सत्, रज, तम इन गुणोंके शक्तिशाली भँवर अति उलटे प्रकारके हैं. इसलिए इनकी विषमताको दूरकर इन्हें परमात्माकी ओर अग्रसर कर दूँ.

गुण पख इन्द्री अवला, करुं ते सवला साथ ।
करी निरमल सुख दऊं नेहचल, करुं ते सहुने सनाथ ॥ २५

गुण अङ्ग इन्द्रियाँ सब उलटे हैं, इन सबको तारतम ज्ञान द्वारा सीधा कर सन्मार्ग पर लगा दूँ. सुन्दरसाथके हृदयको निर्मल बना कर उन्हें अखण्ड सुख प्रदान करूँ तथा धामधनीके साथ अपने सम्बन्धकी पहचान कराकर अनाथ बने हुए सुन्दरसाथको सनाथ बना दूँ.

प्रक्रत सरवे पिंडनी, सवली करुं सनमुख ।
दुख दावानल करुं अलगो, देखाडुं ते अखंड सुख ॥ २६

इस शरीरकी प्रकृति एवं प्रवृत्तिको सीधा करके सत्य मार्ग (धनीजी)की ओर मोड़ दूँ. मैं दुःख रूपी दावानलको शान्त कर सुन्दरसाथको परमधामके अखण्ड सुख दिखा दूँ.

मन चित बुध अहमेव अवला, करुं जोरावर जेर ।
हवे हार्‌या सर्वे जीताडी, फेरवुं ते सवले फेर ॥ २७

मन, बुद्धि, चित्त तथा अहंकार ये सब उलटे हैं अर्थात् मायाकी ओर उन्मुख हैं, इन्हें तारतम ज्ञानकी असीम शक्ति द्वारा अपने आधीन कर लूँ. पराजित हुई इन्हीं गुण, अंग, इन्द्रियोंको अब विजयश्री दिलाकर सीधे धामधनीकी ओर अग्रसर कर दूँ.

चोर टाली करुं वोलावो, सुख सीतल करुं संसार ।
विधविधनां सुख दऊं विगते, कांई रासतणां आ वार ॥ २८

आत्माके बलको हरण करने वाली इन्द्रियोंकी चोरीको मिटाकर उन्हें धामधनी एवं परमधामकी ओर ले जाने वाली बना दूँ. इस प्रकार समस्त संसारको शाश्वत सुख और शीतलता प्रदान करूँ. इस बार विभिन्न प्रकारके जागनी रासके सुख सबको अच्छी तरहसे प्रदान करूँ.

कोईक दिन साथ मोहनां जलमां, लहेर विना पछटाणां ।
वासना घणी वल्लभ मुने, न सहुं ते मुख करमाणां ॥ २९

कई दिनोंसे सुन्दरसाथ इस मोहरूपी जलमें बिना लहरके ही गोते खाते रहे हैं. मुझे ब्रह्मवासनाएँ अति प्रिय हैं. अतः मैं उनके उदास चेहरोंको देखकर सहन नहीं कर सकती.

प्रकरण १० चौपाई ३५४

मारा साथ सनमंधी चेतियो, ए हासीनो छे ठाम ।
आप वालो घर विसरी, हवे जागी भूलो कां आम ॥ १

हे मेरे मूल सम्बन्धी सुन्दरसाथजी ! तुम सावधान हो जाओ. यह संसार तुम्हें हँसीका पात्र बनानेका स्थान है. तुम अपने आपको, धामधनीको तथा अपने घर अखण्ड परमधामको भूल गए हो. तारतम ज्ञानके द्वारा जागृत होने पर भी इस प्रकार क्यों भूल रहे हो ?

साथजी तमने रामत, जोयानो छे ख्याल ।
जेनुं मूल नहीं तेणे बांधिया, ए हांसीनो छे हवाल ॥ २

हे सुन्दरसाथजी ! तुम्हें मायावी खेल देखनेकी इच्छा है, किन्तु जिस मायाका कोई जड़ मूल ही नहीं है उसने तुम्हें बाँध लिया है. यह तो एक हास्यास्पद स्थिति है.

तमे मांगी रामत विनोदनी, तेणे विलस्यां तमारा मन ।
वात वालाजीनी विसरी, जे कह्यां मूल वचन ॥ ३

तुम सबने परमधाममें आनन्द-विनोदका खेल माँगा था. तुम्हारा मन उसी खेलमें मग्न होकर विलास करने लगा. परमधाममें श्रीराजजीके साथ किए गए प्रेम सम्वाद तथा मूल वचनको तुम भूल गए हो.

गूंथो जाली दोरी विना, आप बांधो मांहें अंग ।
अंग विना तमे तरफडो, कांई ए रामतना रंग ॥ ४

बिना रस्सी या अस्तित्वहीन मायाका जाल बुन कर तुमने उसीसे अपने अंगोंको बाँध लिया है अर्थात् स्वयंको बन्दी बना रखा है. तुम्हारा मूल अंग तो परमधाममें है तथापि यहाँ अब बिना अंगके तड़फ रहे हो. वस्तुतः मायावी रामतका रंग (प्रभाव) ही इस प्रकारका है.

आप बंधाणां आपसुं, एणे कोहेडे अंधेर ।
चढ्युं अमल जाणे जेहेरनुं, फरे ते मांहें फेर ॥ ५

अज्ञानरूपी अन्धेरेके कारण इन गुण, अंग, इन्द्रियोंद्वारा तुम अपने ही

कुटुम्बरूपी बन्धनमें बँध रहे हो. तुम पर काम, क्रोध, लोभ, मोह आदिका नशा छाया हुआ है. इसलिए तुम इस झूठे चक्रमें वारंवार घूम रहे हो.

अमल चढ्युं केम जाणीए, कोई आथडे कोई पडे ।
कोई मांहें जागी करी, बांहे ग्रही पगथी चढे ॥ ६

मायाका नशा चढ़ा हुआ है अथवा नहीं इसकी पहचान कैसे हो ? कोई डगमगा रहा है तो कोई गिर रहा है, कोई मायामें ही जागृत होकर अज्ञानी जीवोंके हाथ पकड़ कर ज्ञानकी सीढ़ी पर चढ़नेका प्रयत्न करता है.

एक पडे पगथी थकी, तेहने बीजी ते साहे हाथ ।
खाए ते बंने गडथला, कांई रामत ए अख्यात ॥ ७

कोई ज्ञानरूपी सोपान पर चढ़ कर गिर रहा है. दूसरा कोई ज्ञानी बनकर उसकी सहायता भी कर रहा है, परन्तु नशेके प्रभावमें दोनों ही लड़खड़ाकर अन्तमें गिर जाते हैं. संसारका यह खेल कुछ ऐसा ही अद्भुत है.

कोई पडे पगथी विना, तेहने बीजी ते झालवा जाय ।
पडे ते बंने मोहों भरे, ए हांसी एम ज थाय ॥ ८

कोई तो ज्ञान न होनेके कारण (सीढ़ीके बिना) ही गिर रहा है, अन्य कोई उसे सम्हालने (पकड़ने) के लिए ज्ञानी संत बनकर जाता है. वे दोनों ही मोहके बन्धनमें फँसे चले जाते हैं. इस प्रकार इन दोनोंकी स्थिति हास्यास्पद हो जाती है.

भोम विना ओठुं लिए, अने चरण विना उजाय ।
जल विना भवसागर, तेहमां गलचुवा खाय ॥ ९

यह भूमि (संसार) नाशवान है फिर भी सब इसका आश्रय लेना चाहते हैं तथा चरणके बिना ही (मनसे) दौड़ते हैं. यह भवसागर जल विहीन है फिर भी इसमें गोते लगा रहे हैं (जन्म-मरणके चक्रमें पड़ रहे हैं).

अंत्रीख जुओ उभियुं, हाथ विना हथियार ।
निद्रा छे अति जागते, पिंड विना आकार ॥ १०

यह संसार अन्तरिक्षमें लटका हुआ है. इसके हाथ भी नहीं हैं फिर भी इसने

काम, क्रोध रूपी अस्त्र धारण किया है. इसमें जागृत होने पर भी लोग अज्ञानरूपी निद्रामें डूबे हुए रहते हैं. शरीर नाशवान् है फिर भी आकार धारण किए हुए हैं.

एक नवी कोई आवी मले, ते कहावे आप अजाण ।
कोई मांहें मोटी थई, समझावे सुजाण ॥ ११

यदि किसी उपदेशकको कोई नया व्यक्ति मिल जाता है तो वह उपदेशकके समक्ष स्वयंको अज्ञानी मानता है. उपदेशक उन सबके बीच स्वयंको बड़ा समझ कर समझाने लगता है.

वचन करडा कोई कहे, केने खंडणी न खमाय ।
पछे कलपे बंने कलकले, एने अमल एम लई जाय ॥ १२

उपदेशक, उपदेश देते समय यदि कोई कठोर शब्दोंका प्रयोग करता है, तो अज्ञानी उस खण्डनीको सहन नहीं कर पाता. बादमें श्रोता और वक्ता दोनों पछता कर दुःखी हो जाते हैं. इस प्रकार इन सबको मायाका नशा खींच कर ले जाता है.

खंडी खांडी रडी रडावी, दुख जगवतां दीठां घणां ।
जाग्या पछी ज्यारे जोईए, त्यारे बंनेमां नहीं मणां ॥ १३

खण्डनी करनेवाले स्वयं रोते हैं और दूसरोंको भी रुलाते हैं. दूसरोंको जागृत करते समय अनेक प्रकारके दुःख देते हैं, परन्तु जागृत होनेके बादमें ज्ञात होता है कि श्रोता तथा वक्ता दोनोंमें-से किसीका भी दोष नहीं है.

साथ मांहें हांसी थासे, रस रामत एणी रंग ।
पूर विना तणाणियुं, कोई आडी थाय अभंग ॥ १४

इस प्रकार सुन्दरसाथके बीच (संसारके ऐसे खेलमें मग्न होनेके कारण) हाँसी होगी. क्योंकि इस मायावी खेल (रामत) का रङ्ग ही कुछ इस प्रकारका है कि लोग मोह सागरके जलहीन प्रवाहमें बहते रहते हैं. कोई विरला ही ऐसा होगा जो स्वयं स्थिर रह कर मायाके प्रवाहमें टिका हो.

हरखे हांसी हेतमां, करसे साथ कलोल ।
माया मांगी ते जोई जोपे, रामत झलाबोल ॥ १५

जागृत होनेके बाद परमधाममें सुन्दरसाथ प्रसन्नता पूर्वक एक दूसरे पर हँसेंगे तथा प्रेम पूर्वक मनोरंजन कर आनन्दित होंगे. माँगा हुआ मायाका खेल हमने भली-भाँति देखा. वस्तुतः यह खेल चकाचौंध कर देने वाला है.

व्रख ऊभुं मूल विना, तेहनुं फल वांछे सहु कोय ।
वली वली लेवा दोडती, ए हांसी एणी पेरे होय ॥ १६

यह संसाररूपी वृक्ष मूल बिना ही खड़ा है. सबलोग इसके सुखरूपी फल प्राप्त करना चाहते हैं. उसे प्राप्त करनेके लिए वारंवार दौड़ते हैं. फिर लड़खड़ाकर गिर जाते हैं. इस प्रकार यहाँ हँसी होती है.

अछतां बंध छूटे नहीं, पेरे पेरे छोडे तोहे ।
ए स्वांग सहु मायातणो, साथ बांध्यो रामत जोए ॥ १७

इस असत्य मायाके झूठे बन्धन नहीं छूटते हैं. यद्यपि विभिन्न प्रकारसे (ज्ञान वैराग्य द्वारा) छोडनेका प्रयत्न करते हैं. यह सब तमाशा मायाका ही है. ब्रह्मात्माएँ इस मायावी तमाशेको देखकर उसमें बँध गईं.

प्रकरण ११ चौपाई ३७१

जागणीनुं प्रकरण

हवे जागी जुओ मारा साथजी, ए छे आपण जोग ।
त्रण लीला चोथी घरतणी, चारेनो एहमां भोग ॥ १

हे मेरे सुन्दरसाथजी ! अब जागृत होकर देखो. यह जागनीका ब्रह्माण्ड हमारे लिए है. इस जगतकी तीनों लीलाएँ व्रज, रास तथा जागनी, एवं चौथी परमधामकी लीला; इन चारोंका सुख जागनीके इस ब्रह्माण्डमें प्राप्त होगा.

कह्यां न जाय सुख जागणीनां, सत ठोरना सनेह ।
आ भोममां जेहवुं कहेवाय, कांईक प्रकासुं तेह ॥ २

इस जागनी ब्रह्माण्डके सुखोंका वर्णन नहीं हो सकता, क्योंकि यहाँ पर परमधामका ही प्रेम तथा स्नेहका अनुभव होता है. इस संसारमें जितना कहा जा सकता है उसे किञ्चित् प्रकट कर रही हूँ.

हवे जगवुं जुगते करी, भाजुं भरमना बार ।
रंगे रास रमाडी तमारा, सुफल करुं अवतार ॥ ३

हे सुन्दरसाथजी ! अब मैं तुमको युक्ति पूर्वक जागृत कर भ्रम (अज्ञान) का परदा हटा दूँ. तुम सबको आनन्द पूर्वक जागनी रास खेलाकर मानव अवतारको सफल बना दूँ.

हवे दुख ना दऊं फूल पांखडी, सीतल द्रष्टे जोऊं ।
सुखसागरमां झीलावी, विकार सघला धोऊं ॥ ४

अब मैं तुमको फूलकी पंखुड़ीकी मार जितना दुःख भी नहीं दूँगी तथा प्रेमपूर्ण शीतल दृष्टिसे देखूँगी. परमधामके अखण्ड सुखोंके सागरमें स्नान कराकर अन्तःकरणके सब विकारोंको धो डालुं.

आगे कलकलीने कह्युं रे सखियो, तोहे ना गयो विकार ।
कठण सही तमे खंडणी, वचन खांडा धार ॥ ५

हे सुन्दरसाथजी ! मैंने पहले भी अनेक बार पुकार-पुकार कर कहा है, फिर भी तुम्हारे अन्दरके विकार दूर नहीं हुए, तब भी तुमने तलवारकी तीक्ष्ण धारके समान मेरे खण्डनीपूर्ण कठोर वचनोंको सहन किया.

ते वचन घणुं साले मुने, कठण तमने जे कह्यां ।
मारी वासनाओने निद्रा मांहें, मूल घर विसरी गयां ॥ ६

वे कठोर वचन अब मुझे भी दुःखी कर रहे हैं, क्योंकि मेरी ब्रह्मवासनाएँ अज्ञानताकी इस घोर नींदमें अपना मूल घर ही भूल गईं हैं.

हवे विन ताए गालुं तमने, करुं ते रस कंचन ।
कसनो रंग एवो चढावुं, बेहु पेरे करुं धन धन ॥ ७

हे सुन्दरसाथजी ! अब मैं तुम्हारे हृदयको ताप दिए (क्रोध एवं खण्डनी किए) बिना ही पिघला दूँ और कञ्चनके समान बना दूँ. प्रेमका रंग इस प्रकार चढ़ा दूँ जिससे तुम संसार तथा परमधाम दोनोंमें धन्य धन्य हो जाओगे.

जाणुं साथजी वदेस आव्या, दुख दीठां कै भांत ।
ते माटे सुख आणी भोमे, देवानी मुने खांत ॥ ८

मैं जानता हूँ कि हमारे सुन्दरसाथ मूल वतन परमधामसे यहाँ विदेश (मायावी संसार) में आए हैं और उन्होंने अनेक प्रकारके दुःख देखे हैं. इसलिए इसी संसारमें सुन्दरसाथको सुख देनेकी मेरी प्रबल इच्छा है.

खीजे वढे वासना न जागे, जगव्यानी जुगत जुई ।
आप जाग्यानी जुगत आपुं, त्यारे केम रहे वासना सुई ॥ ९

क्रोध एवं कठोर वचनोंद्वारा ब्रह्मसृष्टि जागृत नहीं होगी. जागृत करनेकी युक्ति तो अलग ही प्रकारकी है. यदि मैं अपनी आत्म-जागृतिकी युक्ति सुन्दरसाथको दिखा दूँ तो ब्रह्म-वासना कैसे सोई हुई रह पाएगी ?

खंडी खांडी खीजिए, जागे नहीं एणी भांत ।
आपोपुं ओलखाविए, साख पुराविए साख्यात ॥ १०

बोध वचन कहते-कहते यदि क्रोधित होकर खण्डनी करें तो भी सुन्दरसाथ जागृत नहीं होगा. मैं चाहता हूँ कि साक्षात् परमधामकी साक्षी देकर तुम्हें आत्माकी पहचान करा दूँ.

हवे जगावी सुख दऊं संभारणुं, करुं आप आपणी वात ।
साथ सहु अम पासे बेसी, करुं सहु विख्यात ॥ ११

अब सब सुन्दरसाथको जागृत कर परमधामके सुख याद दिला दूँ तथा आपसमें अपने घरके मूल सम्बन्धकी बातें करूँ. समस्त सुन्दरसाथ हमारे पास बैठे और मैं सब प्रकारसे परमधामका वृत्तान्त प्रकट करूँ.

आगे आवेस मु कने धणीतणो, वली निध बीजी दीधी ।
निसंक निद्रा उडाडी, साख्यात बेठी कीधी ॥ १२

सर्वप्रथम सद्गुरुने मुझे आवेश दिया फिर दूसरी सम्पत्ति (तारतम ज्ञान) प्रदान की. इस प्रकार सद्गुरुने निस्सन्देह ही अज्ञानरूपी निद्राको निर्मूल कर मुझे प्रत्यक्ष रूपसे जागृत (परमधाममें अवस्थित) कर दिया.

हवे रहेवाय नहीं खिण अलगा, जागणी एम जाणो ।
अहंमेव जाग्यो धामनो, अम मांहें एह भराणो ॥ १३

अब सुन्दरसाथ तथा धामधनीके बिना पलमात्रके लिए भी अलग नहीं रहा जा सकता. उनका क्षणमात्रका वियोग भी सहन न कर सकना ही जागनी (आत्म-जागृति) समझो. "हम परमधामके हैं" इस प्रकार धामका अहंभाव जागृत हो गया है. यह आत्म-भाव पूर्ण रूपेण हमारे अंग प्रत्यंगमें भर गया है.

पहेली जोगमाया थई रासमां, तेहनो ते अति अजवास ।
पण आ जे थासे जागणी, तेहनो कह्यो न जाय प्रकास ॥ १४

सर्व प्रथम योगमायाका प्रकाश रास मण्डलमें था वह अत्यन्त तेजोमय था. परन्तु इस जागनी ब्रह्माण्डमें आत्म-जागृतिकी जो लीला होनेवाली है उसके प्रकाशका वर्णन नहीं किया जा सकेगा.

हवे अधखिण अलगां, साथ विना में न रहेवाय ।
आ लहेर जे मायातणी, साथ उपर में न सहेवाय ॥ १५

अब आधे क्षणके लिए भी सुन्दरसाथके बिना मुझसे नहीं रहा जा सकता. सुन्दरसाथके ऊपर मायाकी दुःखदायी लहरें प्रभाव डाल रहीं हैं, जो मुझसे सही नहीं जाती.

साथजी आ भोमनां, सुख आपीस तमने अपार ।
हेते ते हंससो हरखमां, तमे नाचसो निरधार ॥ १६

हे सुन्दरसाथजी ! इस भूमि (संसार) के अन्दर मैं तुम्हें परमधामके असीम सुख दूँगी. इन्हें प्राप्त कर तुम हर्षसे झूमने लगोगे तथा आत्मविभोर हो कर नाचने भी लगोगे.

मारा प्राणना प्रीतम छो, अंगनानी आतम टोली ।
कलपियां मन रामत जोतां, नाखुं ते दुखडां घोली ॥ १७

तुम मुझे प्राणोंसे भी अधिक प्रिय हो, तुम परमधामकी ब्रह्मांगनाओंके समूह हो. संसारका खेल देखते-देखते तुम्हारा मन जिस प्रकार व्याकुल (दुःखी) हुआ है, अब मैं उस दुःखकी सारी रेखाएँ ही क्षीण कर दूँगी.

करमाणां मुखडां मननां, ते तमारा हुं नव सहुं ।
ए दुख सुखनो स्वाद देसे, तोहे दुख हुं नव दऊं ॥ १८

तुम्हारे मलिन मन तथा वदनको मैं सहन नहीं कर सकती. यद्यपि यह माया दुःख-सुखका आस्वादन कराएगी तथापि मैं तुम्हें दुःख नहीं दूँगी.

सत सुखमां सुख देसे, आ भोमनां दुख जेह ।
तमे हंससो हरखमां, रस देसे दुखडां एह ॥ १९

इस संसारके दुःख जब तुम्हें परमधामके सुख याद दिलाएँगे तब तुम सब प्रेमानन्दमें विभोर होकर हँसोगे. इस प्रकार ये दुःख ही परमधामके सुखोंका आस्वादन कराएँगे.

अमे उपाई आनंद माटे, रामत तो तमे मांगी ।
रामतनां सुख दऊं साचां, चालसुं आहीं जागी ॥ २०

ये झूठे दुःख हमारे आनन्दके लिए ही उत्पन्न किए गए हैं, क्योंकि हे सुन्दरसाथजी ! यह खेल तो तुमने ही माँगा है. इस झूठे खेलमें भी परमधामके सत्य सुख देकर यहीं पर आत्माको जागृतकर परमधाम ले चलेंगे.

सेहेजल सुखमां रेहे सदा, अलप नहीं असुख ।
तमे सुखनो स्वाद लेवाने, मांगी रामत दुख ॥ २१

हम सब परमधामके सहज प्रेमानन्द सुखोंमें मग्न रहते थे. वहाँ किञ्चित् मात्र भी दुःख नहीं था. तुमने परमधामके अखण्ड सुखोंका स्वाद लेनेके लिए दुःखदायी खेल माँगा.

रामत मांगी दुखनी, त्यारे कह्युं अमे एम ।
दुखनी रामत तमने, देखाडुं अमे केम ॥ २२

जब तुमने दुःखरूपी मायावी खेल देखनेकी माँग की तब श्रीराजजीने कहा था कि मैं तुम्हें दुःखरूपी खेल कैसे दिखाऊँ ?

दुख तो केमे दऊं नहीं, तो रामत केम जोवाय ।
खांत खरी जोया तणी, तेहनो ते एह उपाय ॥ २३

यदि तुम्हें किसी भी प्रकारका दुःख न दूँ तो तुम संसारका यह दुःखरूपी खेल कैसे देख पाओगे. तुम्हारे मनमें खेल देखनेकी तीव्र इच्छा थी इसीलिए यह मायावी खेल उत्पन्न किया है.

अमे रामत जाणी घरतणी, जेम रमुं छुं सदाय ।
अमे ऊभां जोइसुं, रामत एणी अदाय ॥ २४

जिस प्रकार हम लोग परमधामकी लीलाओंमें सदैव रमण करते हैं, हमने इस सांसारिक खेलको भी उसी प्रकार (शाश्वत) मान लिया था. हमारी यह धारणा थी कि हम सब परमधाममें ही खड़े-खड़े इस सांसारिक खेलको देखेंगी.

वस्तोगते दुख कांई नथी, जो पाछी वालो द्रष्ट ।
जुओ जागी वचने, तो नथी कांइए कष्ट ॥ २५

वस्तुतः परमधामकी ओर दृष्टि डालेंगे तो वास्तवमें दुःख कुछ भी नहीं है. तारतमके वचनों द्वारा जागृत होकर मायाका खेल देखने पर जरा भी दुःख नहीं होगा.

लागसो जो दुखने, तो दुख तमने लागसे ।
मूल सुख संभारसो, तो दुख पाछां भागसे ॥ २६

यदि तुम इस दुःखमय संसारमें मग्न होकर डूबे रहोगे तो तुम्हें दुःखका अनुभव होगा. यदि परमधामके अखण्ड सुखोंका स्मरण करोगे तो यह सांसारिक दुःख समाप्त हो जाएगा.

द्रष्ट वाली जो जुओ, तो दुख कांइए नथी ।
रामतना रंग करसो आहीं, विनोद वातो मुख थकी ॥ २७

मायाकी ओरसे दृष्टि हटाकर परमधामकी ओर देखोगे तो ये सांसारिक दुःख कुछ भी नहीं हैं. परमधामके अखण्ड सुखोंका अनुभव इसी संसारमें करोगे तो तुम्हारे मुखसे आनन्दकी ही बातें निकलेंगी.

सागर सुखमां झीलतां, जिहां दुख नहीं प्रवेस ।
ते माटे तमे दुख मांग्यां, ते देखाड्यां लवलेस ॥ २८

तुम परमधामके सुख सागरमें मग्न होकर रामतें करते थे वहाँ दुःखोंका प्रवेश ही नहीं है. इसलिए तुमने दुःखकी माँग की. उनका भी थोड़ा-सा रङ्ग मात्र ही दिखाया गया है.

पोढ्यां भेलां जागसे भेलां, रामत दीठी सहु एक ।
वातो ते करसुं जुजवी, विधविधनी विसेक ॥ २९

ब्रह्मात्माएँ सुरता द्वारा परमधामसे एक साथ ही इस संसारमें आईं तथा पुनः एक ही साथ परमधाममें जागृत होंगी. इस झूठे खेलको भी सबने एक साथ ही देखा है, किन्तु परमधाममें जागृत होने पर जिन्होंने जिस प्रकारकी विशेषता देखी वे उसके अनुसार अलग-अलग बातें करेंगी.

दुख तमारा नव सहुं, ते चोकस जाणो चित ।
ए दुख ते सुख घणां देसे, रंग रस ए रामत ॥ ३०

हे सुन्दरसाथजी ! मैं तुम्हारा दुःख सहन नहीं कर पाता. तुम इस बातको निश्चित मान लो, किन्तु संसारके ये दुःख परमधामके अधिक सुखोंका अनुभव करवाएँगे. इस प्रकार यह खेल रसदायी (आनन्ददायी) सिद्ध होगा.

साथने आ भोमनां, सुख देवानो हरख अपार ।
रंगे रास रमाडीने, भेलां जागिए निरधार ॥ ३१

इस संसारमें सुन्दरसाथको सुख दिलानेका मुझे अत्यन्त आनन्द हो रहा है. उनके साथ आनन्दमयी जागनी रास लीला खेलकर हम सब एक साथ परमधाममें जागृत हो जाएँगे.

हवे ल्यो रे मारा साथजी, आ भोमनां जे सुख ।
सही न सकुं तमतणां, जे दीठां तमे दुख ॥ ३२

हे सुन्दरसाथजी ! अब तुम इस भूमिके सुखोंका आनन्द प्राप्त करो, क्योंकि तुम सबने अब तक जो दुःख देखे हैं उन्हें मैं सहन नहीं कर सकती.

लहेर लागे तमने मोहनी, ते हवे हुं नव सकुं सही ।
खंडणी पण नव करुं, जाणुं दुखवुं केम मुख कही ॥ ३३

तुम्हें मोहजलकी लहरोंके थपेड़े लगे, उसे अब मैं सहन नहीं कर सकता.

मुखसे कहकर भी क्यों दुःखी करूँ ? इसलिए कठोर शब्दों द्वारा तुम्हारा खण्डन भी नहीं करूँगी.

हवे कसोटी केम दऊं तमने, करमाणां मुख ते नव सहुं ।
ते माटे वचन कठण, मारा वालाओने केम कहुं ॥ ३४

अब मैं तुम्हें कसनी (कष्टदायक स्थिति) में भी कैसे रखूँ ? क्योंकि मैं तुम्हारे मुखकी मलिनताको (उदासीनता) नहीं देख सकता, इसलिए मेरे प्यारे सुन्दरसाथको मैं कठोर वचन भी कैसे कहूँ ?

बांहे ग्रहीने तारुं तमने, जेम लहेर ना लगे लगार ।
सुखपाल मां सुखे बेसाडी, घेर पोहोंचाडुं निरधार ॥ ३५

मैं तुम्हारा हाथ पकड़ कर तुम्हें मोहजलसे पार करूँ जिससे तुम्हें मायारूपी लहरें तनिक भी स्पर्श न कर पाएँ और तुम्हें सुख शान्ति पूर्वक तारतमरूपी सुखपालमें बैठाकर निश्चत रूपसे मूल घर परमधाममें पहुँचा दूँ.

अंगथी आपी उपजावुं, रस प्रेमना प्रकार ।
प्रकास पूरण करी सहेजे, टालुं ते सरव विकार ॥ ३६

अपने अंग द्वारा (तारतमके विभिन्न रूप द्वारा) अखण्ड ज्ञान देकर अनेक प्रकारके प्रेम रस उत्पन्न करा दूँ. तारतम ज्ञानका संपूर्ण प्रकाश सरलता पूर्वक फैलाकर सभी प्रकारके विकारोंको दूर कर दूँ.

अंग आप्या विना आवेस, प्रेम प्रगट केम थाय ।
आवेस दई करुं जागणी, जेम मारा अंगमां समाय ॥ ३७

सुन्दरसाथको मेरे ज्ञानरूपी आवेश दिए बिना परमधामके मूल सम्बन्धका प्रेम किस प्रकार प्रकट होगा ? इसलिए मैं अखण्ड तारतम ज्ञानरूपी आवेश-शक्ति देकर सुन्दरसाथको जागृत करती हूँ ताकि समग्र सुन्दरसाथ मुझमें अन्तर्निहित हो जाएँ.

हवे सहु भेलां तो चालिए, जो अंग मांहेंथी देवाय ।
जोगमाया तो थाय तमने, जो सांचवटी वटाय ॥ ३८

हम सब सुन्दरसाथ मिलकर एक साथ तभी चलेंगे जब मेरे अंगसे

आवेशरूपी ज्ञान उन्हें दिया जाएगा. इस सच्चे ज्ञानको प्रदान करने पर ही योगमाया रचित रास मण्डलका जैसा अखण्ड प्रेम तुम्हें प्रत्यक्ष प्राप्त होगा.

हवे आवतां दुख वासनाओने, तिहां आडुं दऊं मारुं अंग ।
सारी पेरे सुख दऊं तमने, मांहें न करुं वचे भंग ॥ ३९

अब यदि सुन्दरसाथको किसी भी प्रकारका दुःख प्राप्त होगा तो मैं स्वयं उन समस्त वेदनाओंको वहन कर लूँगी. मैं हर प्रकारसे तुम्हें सुख देते हुए किसी भी प्रकारका व्यवधान नहीं आने दूँगी.

ए लीला करुं एणी भांते, तो रास रंग रमाय ।
विधविधनां सुख दऊं विगते, व्रह वासनाओनो न खमाय ॥ ४०

अब मैं इस अद्वैत लीलाको एकरस होकर एकात्म भावसे इस प्रकार प्रकट करूँगी, जिससे आनन्द पूर्वक जागनी रास हो सके. मैं तुम्हें विभिन्न प्रकारके सुख प्रदान करूँगी क्योंकि मुझसे ब्रह्मात्माओंका विरह सहन नहीं होता है.

जागणीनां सुख दऊं तमने, रास मांहें रमाडुं रंग ।
सततणां सुख केम आवे, जिहां न दऊं मारुं अंग ॥ ४१

हे सुन्दरसाथजी ! मैं तुम्हें जागनीका सुख प्रदान करके आनन्द पूर्वक जागनी रास खेलाऊँ. जब तक मैं अपना अंग (अखण्ड तारतम ज्ञान) तुम्हें प्रदान न करूँ तब तक तुम्हें सत्य सुख (अखण्ड परमधाम तथा धनीजीके सुखों) की प्राप्ति कैसे होगी ?

अंग आपी अंगनाने, अंगना भेलुं अंग ।
पास दऊं पूरो प्रेमनो, करुं ते अवचल रंग ॥ ४२

मैं ब्रह्मात्माओंको अपना ज्ञान देकर उन्हें अपने अंगमें समाहित कर दूँ अर्थात् हम सब एक ही स्वरूप हो जाएँ. मैं प्रेमका ऐसा पक्का रंग लगा दूँ कि वह कभी भी न मिटे.

असतथी अलगां करुं, सतसुं करावुं संग ।
परआतमासुं बंध बांधुं, जेम प्रले न थाय कहिए भंग ॥ ४३

अनित्य (असत्य) मायासे तुम्हें अलग कर सत्य परमात्माके साथ मिलन

करा दूँ. पर-आत्माके साथका तुम्हारा सम्बन्ध दृढ़ करवा दूँ ताकि प्रलयकालमें भी यह अटूट रहे.

धणिए जगावी मुने एकली, हुं जगवुं बांधा जुथ ।
दुखनी भोम दूथी घणी, ते करी दऊं सत सुख ॥ ४४

सद्‌गुरु निजानन्द स्वामीने मुझे अकेले ही जगाया. मेरी आकांक्षा है कि मैं सुन्दरसाथके समूहों (चालीस जुत्थ) को जागृत करूँ. यह दुःखोंकी भूमि अत्यन्त दुःखदायी है, उसे धनीजीके अखण्ड सुखोंमें परिणत कर दूँ अर्थात् इसे ही अखण्ड सुखदायी बना दूँ.

साथ करुं सहु सरखो, तो हुं जागी प्रमाण ।
जगाडी सुख दऊं धामनां, पोहोंचाडुं मूल एंधाण ॥ ४५

सब सुन्दरसाथको ज्ञान देकर मैं अपने समान बना दूँ तभी मेरा जागृत होना सार्थक माना जाएगा. उन्हें जागृत कर परमधामका अखण्ड सुख दूँ तथा उनके हृदयमें अखण्ड सुखोंके मूल सङ्केत स्थापित कर दूँ.

आवेस जेहने में दीठा पूरा, जोगमायानी निद्रा तोहे ।
पण जे सुख दीसे जागतां, अम विना न जाणे कोए ॥ ४६

मैंने जिस स्वरूपमें पूर्ण आवेश देखा उनमें भी योगमायाकी निद्रा है, परन्तु पूरी जागृत अवस्थामें जो सुख प्राप्त होता है उसे हमारे बिना अन्य कोई नहीं जान सकता.

जे जागी बेठा निज धाममां, तेहने आवेसनुं सुं कहिए ।
तारतम तेज प्रकास पूरण, तेणे सकल विधे सुख लहिए ॥ ४७

जो ब्रह्मात्माएँ जागृत होकर परमधाममें बैठ गई हैं उनको आवेशके विषयमें क्या कहें ? तारतमका तेज पूर्ण प्रकाश देने वाला है. इसलिए इसके द्वारा सभी प्रकारके अखण्ड सुख प्राप्त करें.

आवेसने नहीं अटकल, पण जागवुं अति भारी ।
आवेस जागवुं बंने तारतमे, जो जुओ जुगत विचारी ॥ ४८

आवेशको अटकलों द्वारा तौला नहीं जा सकता (वह स्वयं पूर्ण है), परन्तु

ज्ञानद्वारा जागृत होना विशेष महत्त्व पूर्ण बात है. यदि विचारपूर्वक देखें तो ज्ञात होगा कि आवेश तथा तारतम दोनों ही जागृत करनेके लिए हैं.

पैयां सहुना काढे प्रगट, नहीं तारतमने अटकल ।
आवेस जागवुं हाथ धणीने, एह अमारुं बल ॥ ४९

तारतम ज्ञानको अटकल करनेकी आवश्यकता नहीं है, इसने सबके लिए मार्ग स्पष्ट कर दिया है. आवेश देकर जागृत करना सद्‌गुरु धनीके हाथमें है, किन्तु सद्‌गुरु प्रदत्त तारतम ज्ञानके द्वारा जागृत करना हमारे सामर्थ्यकी बात है.

तारतमनां सुख साथ आगल, विध विधनां वाले कीधां ।
पछे ए सुख एकली इन्द्रावतीने, दया करी धणिए दीधां ॥ ५०

सद्‌गुरुधनीने सुन्दरसाथके आगे तारतमज्ञानके विभिन्न प्रकारके सुख प्रकट किए, पश्चात् इन्द्रावती पर दया कर उसे अकेलीको ही ये समस्त सुख प्रदान किए.

धन धन धणी धन तारतम, धन धन सखी जे लावी ।
धन धन सखी हुं सोहागणी, मुझ मांहें ए निध आवी ॥ ५१

धामधनी धन्य हैं और तारतम ज्ञान भी धन्य है. श्री श्यामाजीके आवेशके साथ तारतम ज्ञान लेकर आने वाली सखी सुन्दरबाई भी धन्य है. मैं सुहागिनी इन्द्रावती भी धन्य हो गई हूँ. क्योंकि यह तारतम ज्ञानरूपी निधि सद्‌गुरु द्वारा मुझे प्राप्त हुई है.

मुं माटे लाव्या धणी धामथी, बीजा कोने न थयुं एहनी जाण ।
में लीधुं पीधुं विलसियुं, विस्तरियुं प्रमाण ॥ ५२

मेरे लिए ही सद्‌गुरु धनी परमधामसे यह अखण्ड तारतम ज्ञान ले आए हैं. इस रहस्यकी जानकारी अन्य किसीको भी नहीं हुई. मैंने तारतम ज्ञान लेकर उसे हृदयमें धारण किया, उसको समझा (पान किया) तथा उस पर आचरण करते हुए आत्मविभोर हो गई और यथार्थ रूपसे उसका विस्तार भी किया.

ए वाणी साथ मांहें कहेवाणी, पण केने न कीधो विचार ।
पछे दया करीने दीधुं वाले, अंग इन्द्रावतीने आ वार ॥ ५३

यह अखण्ड वाणी तो सुन्दरसाथके बीचमें ही कही गई है, परन्तु इस पर किसीने भी (पूर्णरूपसे) विचार नहीं किया, फिर सद्‌गुरु धनीने दया कर उसे इस जागनीके ब्रह्माण्डमें इन्द्रावतीको दिया.

घणुं धन लाव्या धणी धामथी, बहुविधना प्रकार ।
ते धन सरवे में तोलियुं, तारतम सहुमां सार ॥ ५४

सद्‌गुरु धनी परमधामसे विपुल धन (तारतम, प्रेम, आनन्द, दया, क्षमा आदि) लेकर आए. यह अखण्ड धन विभिन्न प्रकारका है. मैंने उन सबका मूल्याङ्कन किया तो ज्ञात हुआ कि तारतम ज्ञान ही सबका सार (सर्वश्रेष्ठ) है.

तारतमनुं बल कोई न जाणे, एक जाणे मूल सरूप ।
मूल सरूपनां चितनी वातो, तारतममां कै रूप ॥ ५५

इसलिए तारतमका बल (महत्त्व) कोई नहीं जान सकता है. इसे केवल मूल स्वरूप (श्रीराजजीकी अर्धाङ्गिनी श्यामाजीके अवतार स्वरूप) सद्‌गुरु ही जानते हैं. उनकी अन्तरआत्मा (चित्त) की बातें तारतममें अनेक रूपोंमें प्रकट हुई हैं.

साख्यात सरूप इन्द्रावती, तारतमनो अवतार ।
वासना हसे ते वलगसे, ए वचनने विचार ॥ ५६

सद्‌गुरु धनी कहते थे कि इन्द्रावतीका स्वरूप साक्षात् तारतम ज्ञानका ही अवतार है. परमधामकी ब्रह्मात्माएँ ही इस अद्वैत वाणी पर विचार कर इन्द्रावती द्वारा निर्दिष्ट मार्गका अनुसरण करेंगी.

सरूप साथनी ओलखाण, तारतममां अजवास ।
जोत उदोत प्रगट पूरण, इन्द्रावतीने पास ॥ ५७

मूल स्वरूप श्रीराजजी तथा सुन्दरसाथका परिचय करानेका सामर्थ्य तारतम ज्ञानके प्रकाशमें है. उसकी ज्योतिका पूर्ण प्रकाश इन्द्रावतीके हृदयमें है.

वासनाओनी ओलखाण, वाणी करसे तेणे ताल ।
निसंक निद्रा उडी जासे, सांभलतां ततकाल ॥ ५८

तारतम वाणी तुरन्त ही ब्रह्मात्माओंकी पहचान कराएगी. तब इस ब्रह्मवाणीको सुनते ही अज्ञानरूपी निद्रा निश्चित रूपसे उड़ जाएगी.

एक लवो सुणे जे वासना, ते संग न मूके खिण मात्र ।
ते थाय गलित गात्र अंगे, प्रगट दीसे प्रेम पात्र ॥ ५९

जो ब्रह्मात्माएँ इस तारतम वाणीका एक शब्द भी सुन लेंगी, वे एक क्षणके लिए भी इसका संग नहीं छोड़ेंगीं. उनका प्रत्येक अंग प्रेमसे गल जाएगा तथा वे प्रत्यक्ष रूपसे प्रेमके पात्र दिखाई देंगीं.

ए वाणी सांभलतां जेहने, आवेस न आव्यो अंग ।
ते नहीं नेहेचे वासना, तेनो करुं जीव भेलो संग ॥ ६०

इस अखण्ड वाणीको सुनकर जिसके अंगमें प्रेम नहीं छलकता, वह निश्चित रूपसे परमधामकी आत्मा नहीं है, उसे जीवके साथ मिला देते हैं.

वासना जीवनो बेहेरो एटलो, जेम सूरज द्रष्टे रात ।
जीव तणुं अंग सुपननुं, वासना अंग साख्यात ॥ ६१

ब्रह्मात्माओं तथा जीवमें उतना ही अन्तर है जितना सूर्य और रात्रिमें होता है. जीव सृष्टिका अंग स्वप्नका है. जबकि ब्रह्मसृष्टि साक्षात् श्री राजजीकी अंग स्वरूपा हैं.

वली बेहेरो वासना जीवनो, एहना जुजवा छे ठाम ।
जीवतणुं घर निद्रा मांहें, वासना घर श्री धाम ॥ ६२

यदि ब्रह्मात्माओं तथा जीवका पुनः निरूपण करें तो इन दोनोंके मूल स्थान भी अलग- अलग दिखाई देंगे. जीवसृष्टिका वास अज्ञानरूपी निद्राके अन्तर्गत है जबकि ब्रह्मात्माओंका घर अखण्ड परमधाम है.

न थाय नवो न लोपाय जुनो, श्रीधाम एणी प्रकार ।
घटे वधे नहीं पत्र एके, सत सदा सर्वदा सार ॥ ६३

अखण्ड परमधाम कुछ इस प्रकारका है कि वहाँ न तो कोई नया उत्पन्न

होता है और न ही पुराना लुप्त होता है. वहाँ वृक्षके पत्तोंमें भी घट–बढ़ नहीं होती. वहाँकी सभी वस्तुएँ सत्य हैं, नित्य हैं तथा सदैव एकरस हैं.

जदिप संग थयो कोई जीवनो, तेनो न करुं मेलो भंग ।
ते रंगे भेलुं वासना, वासना सतनुं अंग ॥ ६४

यदि किसी जीवका संग ब्रह्मवासनाओंके साथ हो गया हो तो उस जीवको भी मैं अलग (अखण्ड सुखसे वञ्चित) न होने दूँगी. उसे भी वासनाओंके रङ्गमें रङ्गकर प्रेमानन्दका सुख दूँगी. क्योंकि वासना तो सत्यस्वरूप धनीके अङ्ग हैं.

तारतम तेज प्रकास पूरण, इन्द्रावतीने अंग ।
ए मारुं दीधुं में देवाय, हुं इन्द्रावतीने संग ॥ ६५

श्रीसद्‌गुरु धनीने कहा है कि तारतमके तेजका पूर्ण प्रकाश इन्द्रावतीके अन्तःकरणमें समाहित हुआ है. मैंने इन्द्रावतीको तारतम ज्ञान दिया है और उनके द्वारा सुन्दरसाथको दिलवाया है. मैं सदैव इन्द्रावतीके साथ ही हूँ.

इन्द्रावतीने हुं अंगे संगे, इन्द्रावती मारुं अंग ।
जे अंग सोंपे इन्द्रावतीने, तेने प्रेमे रमाडुं रंग ॥ ६६

सद्‌गुरुने यह भी कहा कि मैं इन्द्रावतीके अन्तःकरणमें हूँ. इन्द्रावती मेरी ही अंग स्वरूपा है. इसलिए जो कोई अपना अंग (सर्वस्व) इन्द्रावतीको अर्पण करेगा मैं उसे प्रेमके रङ्गमें (प्रेमानन्द लीलामें) रङ्ग दूँगा.

बुध तारतम भेलां बंने, तिहां पहेले पधार्‌या श्री राज ।
अंग मारे अजवास करी, साथना सार्‌यां काज ॥ ६७

तारतम ज्ञान तथा जागृत बुद्धि दोनों जहाँ एकत्रित हो जाते हैं वहाँ श्रीराजजी पहलेसे ही विराजमान हो जाते हैं. उन्होंने मेरे अंगमें प्रकाश फैला कर सुन्दरसाथके कार्यको सिद्ध कर दिया अर्थात् जागनीका कार्य पूर्ण कर दिया.

सुख दऊं सुख लऊं, सुखमां ते जगवुं साथ ।
इन्द्रावतीने उपमा, में दीधी मारे हाथ ॥ ६८

मैं चाहता हूँ कि मैं ब्रह्मात्माओंको सुख दूँ तथा उनका सुख भी ग्रहण करूँ

और उनको परमधामके सुखमें जागृत करूँ. मैंने स्वयं इन्द्रावतीको यह कार्यभार सौंपकर उसे यह शोभा (उपमा) दी है.

में दया तमने कीधी घणी, जो जुओ आंख उघाडी ।
नहीं जुओ तोहे देखसो, छाया निसरी ब्रह्मांड फाडी ॥ ६९

मैंने तुम पर अत्यन्त कृपा की है, उसे विवेकरूपी आँखे खोलकर देखो. यदि तुम प्रयास कर नहीं देखोगे तो भी वह स्वयं दिखाई देगी, क्योंकि अब तारतम ज्ञानकी ज्योति इस संसार (ब्रह्माण्ड) को पार कर आगे निकल गई है अर्थात् परमधाममें पहुँच गई है.

मूलगी आंखां दऊं उघाडी, जेम आडी न आवे मोह सृष्ट ।
सत सुखने ओलखावुं, जेम घर आवे दृष्ट ॥ ७०

मैं तुम्हारी मूल दृष्टि (परात्माकी आँखे) खोल दूँ ताकि इस मायाकी मोहसृष्टि तुम्हारे मार्गमें अवरोधक न बनें. मैं परमधामके अखण्ड सुखोंकी पहचान करा दूँ, जिससे तुम मूल घर परमधामको देख सको.

तारतमनो जे तारतम, अंग इन्द्रावती विस्तार ।
पैया देखाड्या सारना, ते पारने वली पार ॥ ७१

तारतम मन्त्रका रहस्य (अठारह हजार सात सौ अठावन चौपाईयुक्त) तारतम सागर (तारतम वाणी) है. इन्द्रावती द्वारा इसका विस्तार हुआ है. इस वाणीके द्वारा हद भूमिसे परे बेहद तथा उससे भी परे अक्षर और अक्षरातीतका सारगर्भित मार्ग बताया गया है.

ब्रह्मांड बंने अखंड कीधां, तेमां लीला अमारी ।
ब्रह्मांड त्रीजो अखंड करवो, ए लीला अति भारी ॥ ७२

अक्षरब्रह्मके हृदयमें अखण्ड हुए व्रज तथा रास दोनों ब्रह्माण्डोंमें हम ब्रह्मात्माओंकी ही लीलाएँ हैं. जागनीके इस तीसरे ब्रह्माण्डको भी अखण्ड बनाना है, क्योंकि यह जागनी लीला इन दोनों (व्रज तथा रास) से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है.

त्रण लीला माया मधे, अमे प्रेमे मांडी जेह ।
आ लीला चोथी माणतां, अति अधिक जाणी एह ॥ ७३

व्रज, रास तथा जागनी, इन तीनों लीलाओंका अनुभव हम सबने कालमाया तथा योगमायाके ब्रह्माण्डमें प्रेमपूर्वक किया, परन्तु जागनी लीलामें चौथी परमधामकी लीलाका भी अनुभव होनेके कारण यह जागनी लीला श्रेष्ठ मानी गई है.

एक सुख सुपननां, बीजां जागतां जेम थाय ।
पहेली त्रण लीला आ चोथी कही, सुख अधिक एणी अदाय ॥ ७४

जिस प्रकार स्वप्नके सुखोंसे अधिक आनन्द जागृतिके सुखों द्वारा प्राप्त होता है, उसी प्रकार व्रज तथा रासकी लीलाओंसे अधिक आनन्द जागनी लीलामें प्राप्त होता है. व्रज, रास तथा जागनी इन तीनों लीलाओंसे भी अधिक श्रेष्ठ चौथी परमधामकी लीलाका अनुभव भी इसी जागनी लीलामें होगा. इसलिए व्रज तथा रासकी लीलासे जागनी लीलाका सुख श्रेष्ठ माना जाता है.

पहेलुं द्रष्टे जे अमने आवियुं, तेटला ते मांहें अजवास ।
ते अजवास मांहें अमे रमुं, बीजा लोक सहुनो नास ॥ ७५

पहले योगमाया निर्मित रास मंडलमें जो दृष्टिगोचर हुआ उसमें उतने ही स्थान पर प्रकाश था. उस प्रकाशमें हम रमण करते रहे. उस समय अन्य सब लोकोंका विनाश हो गया था.

हवे चौद लोक चारे गमां, प्रकास करुं साथ जोग ।
जीव सहु जगवी करी, टालुं ते निद्रा रोग ॥ ७६

अब चौदह लोकों तथा चारों दिशाओंमें सुन्दरसाथके लिए तारतम ज्ञानका यथायोग्य प्रकाश करूँ. उस अखण्ड तारतम ज्ञान द्वारा सब जीवोंको जागृत करके निद्रा (अज्ञान) रूपी रोगको सदाके लिए मिटा दूँ.

अमे प्रगट थईने पाधरा, चालसुं सहुए घेर ।
वेराट वलीने थासे सवलो, एक रस एणी पेर ॥ ७७

हम सब सुन्दरसाथ इस जगतमें प्रकट (एकत्रित) होकर सीधे निजघर

(परमधाम) की ओर प्रस्थान करेंगे. संसारके प्राणी (वैराट) अज्ञानताका मार्ग छोड़कर सन्मार्गको ग्रहण करेंगे, तथा उन्हें आठ प्रकारकी अखण्ड मुक्ति प्राप्त होगी. इस प्रकार समग्र सृष्टि एक रस हो जाएगी.

हवे ए वचन केम प्रगट पाडुं, पण मारे करवो सहु एक रस ।
०वस्त देखाड्यां विना, वेराट न आवे वस ॥ ७८

अब तारतमके इन वचनोंको मैं किस प्रकार स्पष्ट रूपसे प्रकट करूँ, परन्तु मुझे तो संसारके सभी प्राणियोंको एक रस (सन्मार्गगामी) बनाना है. वस्तुका ज्ञान कराए बिना अर्थात् तारतमज्ञान द्वारा परमात्माका अनुभव कराए बिना ये संसारी लोग वशीभूत नहीं होंगे.

वेराट वस कीधा विना, अखंड थाय केम एह ।
अमे रामत जोई इछा करी, मांहें भंग थाय केम तेह ॥ ७९

इस प्रकार वैराट (संसारके प्राणियों) को वश किए बिना अर्थात् उन्हें तारतम ज्ञान द्वारा सन्मार्गगामी (एक ही परमात्माके उपासक) बनाए बिना वे किस प्रकार अखण्ड (स्थिर) होंगे ? हम ब्रह्मात्माओंने परमधाममें इस संसाररूपी खेलको देखनेकी इच्छा व्यक्त की थी, वह बीच में ही भंग कैसे होगी अर्थात् यह संसार ब्रह्मात्माओंके संसर्गसे अवश्य अखण्ड हो जाएगा

अनेक थासे आगल, आ वाणीनो विस्तार ।
लवलेस कांईक कहुं थावा, अखंड आ संसार ॥ ८०

भविष्यमें इस तारतम वाणीका विशेष रूपसे प्रचार एवं प्रसार होगा. अभी तो मैंने इस संसारको अखण्ड बनानेके लिए थोड़ा-सा ही कहा है.

ए वाणी कही में विगते, ते विस्तरसे विवेक ।
मारा साथने कही में छानी, पण ए छे घणुं विसेक ॥ ८१

मैंने इस वाणीके रहस्यको बड़ी युक्तिसे कहा है. भविष्यमें इसका विवेक पूर्वक विस्तार होगा. मैंने अपने सुन्दरसाथको समयानुसार मात्र संकेत द्वारा

ही कहा है, परन्तु यह वाणी तो बहुत ही विशिष्ट है.

संसार सहुनां अंगमां, मारी बुधनो करुं प्रवेस ।
असत सरवे सत करुं, मारी जागणी ने आवेस ॥ ८२

मैं संसारके सभी जीवोंके अंगमें अपनी ज्ञानरूपी बुद्धिका प्रवेश करवा कर अपनी जागनीकी आवेश-शक्तिसे असत्य जीवोंको भी सत्य (अखण्ड) कर दूँ, ऐसी मेरी आकांक्षा है.

बुध सरूप अक्षरनी, आवी अमारे पास ।
ब्रह्मांड जोगमाया तणो, तेणे रुदे ग्रह्यो रास ॥ ८३

मुझे अक्षर ब्रह्मकी बुद्धि प्राप्त हुई है. उसी अक्षरकी बुद्धिने योगमायाके ब्रह्माण्डको अपने हृदयमें ग्रहण किया है.

मारा धणी तणे चरणे हुती, आटला ते दाडा गोप ।
वचन जे सुकजी तणां, ते केम करुं हुं लोप ॥ ८४

अक्षरकी यह बुद्धि इतने दिनों तक (अखण्ड रास लीलाके उपरान्त आज तक) मेरे धनी (सद्‌गुरु) के चरणोंमें थी. इसलिए इतने दिनों तक छिपी रही. (अक्षरकी बुद्धि रास लीलाके बाद आज दिन तक धामधनीके ध्यानमें रहकर गुप्त थी और बुद्धावतारके समयकी प्रतीक्षा कर रही थी) ये वचन शुकदेवजीके कथनानुसार कहे गए हैं. अब इन शब्दोंको मैं क्यों गुप्त रखूँ ?

व्रज रास मांहें अमे रमुं, बुध हुती रासमां रंग ।
हवे आवी प्रगटी, आंही उदर मारे संग ॥ ८५

व्रज तथा रास मण्डलमें हम सबने लीलाएँ की तब अक्षर ब्रह्मकी बुद्धि रास मण्डलके रङ्गमें रङ्गी हुई थी. अब वह मेरे अंगमें प्रवेश करके यहाँ प्रकट हो गई है.

इन्द्रावती वाला संगे, उदर फल उतपन ।
एक बुध मोटी अवतरी, बीजी ते जोत तारतम ॥ ८६

इन्द्रावती सदैव धामधनीके साथ ही है, (उसके हृदयमें सद्‌गुरु स्वयं

विराजमान हैं.) इसलिए उसके हृदयसे यह वाणी उत्पन्न हुई है. एक ओरसे अक्षरब्रह्मकी बुद्धि तथा दूसरी ओरसे तारतमकी ज्योति उसके अन्तःकरणमें प्रवेश कर अवतरित हुई है.

बंने सरूप थयां प्रगट, लई मांहोंमांहें बाथ ।
एक तारतम बीजी बुध, ए जोसे सनमुख साथ ॥ ८७

दोनों स्वरूप (तारतम ज्ञान एवं अक्षरकी बुद्धि) इकठ्ठे मिलकर इन्द्रावतीके हृदयमें प्रकट हुए हैं. उन दोनोंमें एक जागृत ज्ञान तारतम और दूसरी अक्षरकी बुद्धि है. इन दोनोंका मिलाप सुन्दरसाथ अपने सामने देखेंगे.

अक्षर केरी वासना, कह्यां जे पांच रतन ।
कागल लाव्यो अमतणो, सुकदेव मुनि धन धन ॥ ८८

अक्षरब्रह्मकी वासनाएँ, जिन्हें पाँच रत्न कह कर सम्बोधित किया गया है, उनमें-से एक शुकदेवजी हैं, जो हमारे घर परमधामका पत्र (श्रीमद्भागवत) लेकर आए हैं, इसलिए वे धन्य हैं.

विस्नु मन रामत लई, ऊभो ते बंने पार ।
भली भांत भगवान भेला, सनकादिक थंभ चार ॥ ८९

विष्णु भगवान मनमें खेल देखनेकी इच्छा लेकर नीचे पातालमें शेषशायी नारायणके रूपमें तथा ऊपर आदिनारायणके रूपमें विराजमान हैं. (भगवान विष्णु, आदिनारायण तथा शेषशायी नारायणको एक ही रूप माना गया है) उनके साथ धर्म तथा ज्ञानके स्तम्भ चारों सनकादि भी हैं.

महादेवजीए व्रजलीला, ग्रह्यो अखंड ब्रह्मांड ।
अक्षर चित चोकस थयो, ए एम कहावे अखंड ॥ ९०

भगवान शङ्करने अखण्ड व्रजलीलाको अपने हृदयमें ग्रहण किया है. यह व्रज लीला अक्षर ब्रह्मके चित्तमें अंकित होकर अखण्ड हुई है.

कबीर साख ज पूरवा, लाव्यो ते वचन विसाल ।
प्रगट पांचे ए थयां, बीजा सागर आडी पाल ॥ ९१

संत कबीर अक्षरातीत ब्रह्म तथा ब्रह्मसृष्टिकी साक्षी देनेके लिए विशाल वचन

लेकर आए. इस प्रकार अक्षर ब्रह्मकी ये पाँचों वासनाएँ (शुकदेवमुनि, सनकादिक, विष्णु भगवान, शंकर भगवान तथा सन्त कबीर) प्रगट हुईं. शेष सबके लिए यह मोहजल (भवसागर) बाँधकी दीवाल (पाल) की भाँति अवरोधक बन गया.

अमे बुधने प्रकासी करी, जासुं अमारे घर ।
वैकुंठ विस्नुने जगवसे, बुध देसे सरवे खबर ॥ ९२

हम जागृत बुद्धिको प्रकाशित कर अपने घर परमधाम जाएँगे. यही बुद्धि वैकुण्ठके विष्णु भगवानको अखण्डका बोध करवा कर उन्हें जागृत करेगी. इस प्रकार अक्षरकी बुद्धि सारे संसारको शुभ समाचार देगी.

खबर देसे भली भांते, विस्नु जागसे ततकाल ।
आवसे आणे नेत्रे निद्रा, त्यारे प्रले थासे पंपाल ॥ ९३

अक्षरकी जागृत बुद्धि सबको सम्पूर्ण समाचार देगी. भगवान विष्णु तुरन्त ही जागृत हो जाएँगे. उनकी आँखें संसारकी ओरसे हट जाएगी अर्थात् उनकी रुचि अनित्य मायावी संसारसे हट कर, अखण्ड (अद्वैत) भूमिका परमधामकी ओर लग जाएगी. उस समय इस झूठे ब्रह्माण्डका प्रलय होगा.

क्षर रामत इछाए करे, अक्षर आपो आप ।
एहनी वासना पोहोंचसे इहां लगे, ए सत मंडल साख्यात ॥ ९४

अक्षरब्रह्म अपनी इच्छासे नश्वर ब्रह्माण्डोंकी रचना करते हैं. अक्षरकी पाँच वासनाएँ यहाँ (अक्षरब्रह्म) तक पहुँचेगीं. यह अक्षर धाम साक्षात् सत्य है.

वासनाओ पांचे वल्या पछी, भेली बुध वसेक विचार ।
अक्षर आंख उघाडसे, उपजसे हरख अपार ॥ ९५

इन पाँचों वासनाओंके लौट जाने पर अक्षरकी बुद्धि भी खेलकी विशेष बातों पर विचार कर उनके साथमें ही लौट जाएगी. तब अक्षर ब्रह्म आँखें खोलेंगे (जागृत होंगे) और उनके मनमें असीम आनन्द उत्पन्न होगा.

त्यारे लीला त्रणे थिर थासे, अखंड एणी प्रकार ।
निमेष एक न विसरे, रुदे रहेसे सरूपने सार ॥ ९६

तब ये तीनों लीलाएँ (व्रज, रास तथा जागनी) अक्षरके अन्तःकरणमें स्थिर

होगी, इस प्रकार ये तीनों लीलाएँ अखण्ड होंगी. अक्षरब्रह्म क्षण मात्रके लिए भी इन लीलाओंको नहीं भूलेंगे. उनके हृदयमें तीनों लीलाओंका स्वरूप स्थिर हो जाएगा.

उतम कहुं वली ए मधे, जिहां तारतमनो विस्तार ।
वासनाओ पांचे बुधे करी, साख पूरसे संसार ॥ ९७

मैं इस ब्रह्माण्डके बीच पुनः उत्तम (श्रेष्ठ) स्थानकी बात कर रही हूँ, वह स्थान नवतनपुरी है जहाँ तारतमका उदय तथा विस्तार हुआ है. अक्षरब्रह्मकी जागृत बुद्धि पाँचों वासनाओंको जागृत कर स्वयंमें समावेश करेगी तब समस्त संसारके प्राणी इसकी साक्षी देंगे.

मारी संगते एम सुधरी, बुध मोटी थई भगवान ।
सत सरूप जे अक्षर, मारे संग पामी ठाम ॥ ९८

अक्षरब्रह्मकी बुद्धि मेरे सान्निध्यमें कुछ इस प्रकार प्रखर हुई और महान बुद्धि (महामति)कहलाई. सत्स्वरूप अक्षरब्रह्मको मेरे कारण ही परमधामकी अद्वैत भूमिकाका सुख प्राप्त होगा.

मारा गुण अंग सहु ऊभां थासे, अरचासे आकार ।
बुध वासना जगवसे, तेणे साख पूरसे संसार ॥ ९९

मेरी पर-आत्माके गुण,अङ्ग सभी परमधाममें जागृत होंगे. (यह जागनी लीला अक्षर ब्रह्मके अन्तःकरणमें अङ्कित होगी तब बहिश्तोंमें) मेरे स्वरूपकी पूजा होगी. अक्षरकी बुद्धि पञ्च वासनाओंको जागृत करेगी. विश्वके जीव इस बातके साक्षी बनेंगे.

बुध तारतम लई करी, पसरी वेराटने अंग ।
अक्षरने एणी विधे, रुदे चढ्यो अधिको रंग ॥ १००

अक्षरकी बुद्धि तारतम ज्ञानको लेकर विराटके चौदह लोकोंमें विस्तृत होगी

अर्थात् श्री तारतम सागरका चारों ओर प्रचार होगा. इस प्रकार अक्षरब्रह्मके हृदयमें अखण्ड परमधामकी लीलाओंका अधिक रंग (आनन्द) चढ़ेगा.

आहीं तेजनां अंबार पूरा, जोत क्यांहे न झलाय ।
एणे प्रकासे सहु प्रगट कीधुं, जिहांथी उतपन ब्रह्मांड थाय ॥ १०१

इस तारतम वाणीमें अथाह ज्ञानका भण्डार भरा हुआ है. इसकी ज्योति (प्रकाश) कहीं भी समा नहीं पाती है. अक्षरब्रह्मको भी इसी तारतम ज्ञानके प्रकाशने प्रकट कर दिया है, जहाँसे ब्रह्माण्डकी उत्पत्ति होती है.

जागतां ब्रह्मांड उपजे, पाओ पलके अपार ।
ते सरवे अमे जोईयां, आहीं थकी आ वार ॥ १०२

अक्षरब्रह्मकी जागृत अवस्थामें एक पलके चौथाई समयमें अनेकों ब्रह्माण्ड उत्पन्न होते हैं. उन सबको मैंने तारतम ज्ञानके प्रकाश द्वारा देख लिया है.

ए लीला छे अति भली, द्रष्टे उपजे ब्रह्मांड ।
ए रमे ते रामत नित नवी, एहनी इछा छे अखंड ॥ १०३

अक्षर ब्रह्मकी यह लीला अत्यन्त सुन्दर है. उनकी दृष्टि मात्रसे अनेकों ब्रह्माण्डोंकी उत्पत्ति हो जाती है. वे सर्वदा नई नई (बाल) लीलाएँ किया करते हैं तथा उनकी इच्छा भी अखण्ड होती है.

ए मंडल अखंड सदा, अक्षर श्री भगवान ।
प्रगट दीसे पाधरा, आहीं थकी सहु ठाम ॥ १०४

यह मण्डल (अक्षरधाम) अखण्ड है, अक्षर ब्रह्म तथा उनके धामका वैभव तारतम ज्ञानके द्वारा इसी जागनीके ब्रह्माण्डसे सीधा (स्पष्ट) देखा जा सकता है.

०मोह उपनो इहां थकी, जे सुंन निराकार ।
पल मेली ब्रह्मांड कीधो, कारज कारण सार ॥ १०५

अक्षरब्रह्मके द्वारा मोह तत्त्वकी उत्पत्ति हुई जिसे शून्य-निराकार कहा जाता है. अक्षर ब्रह्मने ब्रह्मसृष्टिके लिए पलमात्रमें ही इस मायावी खेलकी रचना कर दी.

ब्रह्मांड बंने अखंड कीधां, तेमां लीला अमारी ।
ब्रह्मांड त्रीजो अखंड करवो, ए लीला अति भारी ॥ १०६

कालमाया (व्रज) तथा योगमाया (रास) के दोनों ब्रह्माण्डोंको अक्षर ब्रह्मने अपने अन्तःकरणमें अखण्ड कर लिया है. इन दोनों ब्रह्माण्डोंमें हमारी (ब्रह्मात्माओंकी) लीलाएँ हुईं हैं. अब जागनीके तीसरे ब्रह्माण्डको उनके अन्तःकरणमें अखण्ड करना है. जागनीकी यह लीला अत्यन्त महत्त्वपूर्ण (सारगर्भित) है.

ब्रह्मांड दसो दिस प्रगट किधां, अंतराय नहीं रती रेख ।
सत वासना असत जीव, सहु विध कही विवेक ॥ १०७

अक्षरब्रह्म द्वारा रचित ब्रह्माण्डकी दशों दिशाओंको मैंने तारतम ज्ञान द्वारा प्रत्यक्ष प्रकट कर दिया, इसमें रत्ती भरका भी अन्तर नहीं है. ब्रह्मवासना सत्य (नित्य) हैं तथा जीव असत्य (अनित्य) हैं, मैंने इसका विवेकपूर्वक वर्णन किया है.

मोह अग्यान भरमना, करम काल ने सुंन ।
ए नाम सहु निद्रातणां, निराकार निरगुण ॥ १०८

मोह, अज्ञान, भ्रम, कर्म, काल तथा शून्य ये सब निद्राके ही नाम हैं. इन्हें निराकार निर्गुण कहते हैं.

एटला ते लगे मन पोहोंचे, बुध तुरिया वचन ।
उनमान आगल कही करी, वली पडे ते मांहें नसुंन ॥ १०९

यहीं तक मन बुद्धि चित्त तथा वाणी पहुँचती है. ज्ञानी जन उससे आगेका वर्णन अनुमान द्वारा करते हैं और पुनः शून्य निराकारमें आकर रुक जाते हैं.

सुपननां जे जीव पोते, ते निद्रा ओलाडे केम ।
वासना निद्रा उलंघी, अक्षर पामे एम ॥ ११०

जो जीव (सांसारिक प्राणी) स्वयं स्वप्न द्वारा ही उत्पन्न हुए हैं वे इस

अज्ञानरूपी निद्राको किस प्रकार लाँघ सकते हैं ? ब्रह्मात्माएँ निद्राका परित्याग करके शून्य निराकारको पार कर जातीं हैं, वे इस प्रकार अखण्ड अविनाशी धामको प्राप्त करती हैं.

एणे द्रष्टांते प्रीछजो, वासना जीवनी विगत ।
असत जीव न वोले निद्रा, निद्रा वोले वासना सत ॥ १११

हे सुन्दरसाथजी ! इस दृष्टान्तके माध्यमसे ब्रह्मात्माओं तथा जीवकी वास्तविकता समझ लो. असत्य (मायावी) जीव निद्रा स्वरूप शून्य-निराकारको लाँघ नहीं सकते और सत्य-ब्रह्मात्माएँ निद्राको लाँघकर उस पार चली जातीं हैं.

जुओ सुपने कै वढी मरतां, आएस न आवे आप ।
मारतां देखे ज्यारे आपने, त्यारे धूजे अंग साख्यात ॥ ११२

जिस प्रकार स्वप्न देखने वाला स्वप्नमें अनेक लोगोंको झगड़ते हुए देखता है. उस समय स्वयं उसे किसी भी प्रकारके भयका अनुभव नहीं होता, परन्तु जब उसी स्वप्नमें उसे ही कोई मारने पीटने लगे तो उसका शरीर कम्पायमान हो जाता है और वह स्वप्नसे जागृत हो जाता है. (इसी प्रकार ब्रह्मात्माएँ भी स्वप्नके संसारका खेल देखकर परमधाममें जागृत होंगी तथा अन्य जीवोंका यहीं पर नाश होगा.)

वासना उतपन अंगथी, जीव निद्रा उतपत ।
एणी विधे घर कोई न मूके, वासना जीवनी विगत ॥ ११३

ब्रह्मात्माएँ श्रीराजजीके अंगोंसे उत्पन्न हुई हैं, जीवसृष्टि निद्रा द्वारा उत्पन्न हुई है. इस प्रकार दोनों-आत्माएँ अपना-अपना घर (उद्गमस्थान) नहीं छोड़तीं हैं. ब्रह्मात्माओं तथा जीवकी यही वास्तविकता है.

चौद लोक चारे गमां, सहु सतनुं सुपन ।
एणे द्रष्टांते प्रीछजो, विचारी वासना मन ॥ ११४

हे सुन्दरसाथजी ! चौदह लोकोंमें चारों दिशाओंमें जो कुछ भी है वह सब सत्स्वरूप अक्षरके स्वप्नका विस्तार है. अपने मनमें विचार कर इसी दृष्टान्तसे सब समझ लो.

अग्यान सत सरूपने, तमे कहेसो थाय केम ।
ते विध कहुं सरवे तमने, उपनुं छे एम ॥ ११५

तुम कहोगे कि सत्स्वरूप अक्षरको भी अज्ञानरूपी निद्राने कैसे प्रभावित किया ? जिस प्रकार अज्ञानरूपी निद्राकी उत्पत्ति हुई है, उसे मैं विस्तार पूर्वक समझाऊँगी.

एक तीर ताणी मूकिए, तेणे पत्र कै वेधाय ।
ते पत्र सरवे वेधतां, वार पाओ पल न थाय ॥ ११६

पेड़के पत्तोंको एकत्रित करके यदि उन पर तीर फेंका जाय तो एक साथ कई पत्ते बींध जाते हैं, उन सब पत्तोंको बींधनेमें एक पलके चौथाई भागका भी समय नहीं लगता है.

पण पहेलुं पत्र एक वेधीने, तो बीजा लगे जाय ।
तेमां ब्रह्मांड कै उपजे, वार एटली पण न कहेवाय ॥ ११७

परन्तु बींधते समय प्रथम तो एक पत्तेको बींधकर, वाण दूसरे पत्ते तक पहुँचता है. एक पत्तेसे दूसरे पत्ते तक पहुँचनेमें जितना समय लगता है उतने समयमें तो अक्षरब्रह्म द्वारा कई ब्रह्माण्ड उत्पन्न हो जाते हैं. यह तो एक दृष्टान्त है, वस्तुतः इतना समय भी नहीं कहा जा सकता.

तो आ वार एकनी सी कहुं, एमां सुं थयुं सुपन ।
पण सत भोमनुं असतमां, द्रष्टांत नहीं कोई अन ॥ ११८

एक पत्तेसे दूसरे पत्ते तक तीरके पहुँचनेके समयके विषयमें मैं क्या कहूँ. इतने समयमें अक्षरको कौन-सा स्वप्न आया होगा ? परन्तु असत्य-भूमि (इस झूठे संसार) में सत्यभूमिको समझानेके लिए अन्य कोई दृष्टान्त भी तो नहीं है.

जोत बुध बंने अम कने, अमे प्रगट कीधां प्रकास ।
पूरुं आस अक्षरनी, मारुं सुख देखाडी साख्यात ॥ ११९

तारतमकी ज्योति तथा अक्षरकी बुद्धि दोनों ही मेरे अन्तःकरणमें विराजमान हैं. इनके द्वारा मैंने अक्षरधाम तथा परमधामकी लीलाओंका प्रकाश प्रकट

किया. अब अक्षरब्रह्मकी मनोकामनाको भी साक्षात् परमधामके अखण्ड (निज) सुख दिखाकर पूर्ण कर दूँ.

अजवालुं अखंड थयुं, हवे किरणां क्यांहे न झलाय ।
जोत चाली पोते घर भणी, बुध अक्षर मांहें समाय ॥ १२०

अखण्ड तारतम ज्ञानका प्रकाश उदय हो चुका है. अब इस दिव्य ज्ञानकी किरणें कहीं भी समा नहीं पा रहीं हैं. अब यह तारतमकी ज्योति स्वयं मूल घर परमधामकी ओर चली तथा अक्षरकी बुद्धि अक्षरमें समा गई.

हवे जिहां थकी जोत उपनी, जुओ तेह तणो प्रकार ।
अक्षरातीत मारा घर थया, इहां तेजनां अंबार ॥ १२१

अब यह तारतमकी ज्योति जहाँसे उत्पन्न हुई है उसका विवरण (प्रकार) देखो. हम ब्रह्मात्माओंका मूल घर अक्षरातीत परमधाम ही है. वहाँ पर अखण्ड ज्योतिका भण्डार है.

जोत सरवे भेली थई, कांई आपने घर बार ।
मारा ते घरनी वातडी, केम कहुं मारा आधार ॥ १२२

यह सम्पूर्ण ज्योति मूलघर परमधाममें एकत्रित हो गई. यह हमारे घर परमधामकी बातें हैं. हे मेरे प्राणाधार सुन्दरसाथजी ! मैं उनका वर्णन कैसे करूँ ?

अमे घर आहींथी जोइयां, आंहीं अजवालुं अपार ।
विविध पेरे एणे तारतमे, देखाड्यां दरबार ॥ १२३

हमने इस संसारमें बैठकर यहींसे तारतमकी ज्योति द्वारा अपने मूलघर परमधामको देख लिया है. यहाँ तारतमका असीम प्रकाश है. इस प्रकार तारतमज्ञानने विभिन्न प्रकारसे धामधनीका दरबार (परमधाम) दिखा दिया.

अमे विलास कीधां घर मधे, वालासुं अनेक प्रकार ।
मुने दीधी निध दया करी, श्री देवचन्द्रजी दातार ॥ १२४

हम सबने निजधाममें श्रीराजजीके साथ अनेक प्रकारसे आनन्द विलास

किया. यह सम्पूर्ण निधि (अनुभव) तारतमके दाता सद्‌गुरु श्री देवचन्द्रजीने मुझे दयापूर्वक दी है.

बीज वचन बे वालातणां, आ तेह तणो अजवास ।
जे वाव्युं मारे वालैए, तेणे पूर्यां मनोरथ साथ ॥ १२५

सद्‌गुरु धनी श्री देवचन्द्रजी महाराज द्वारा दिए गए तारतम ज्ञानरूपी बीज वचनका प्रकाश ही यह सम्पूर्ण वाणी है. उपरोक्त मूल वचनरूपी बीज प्रियतम सद्‌गुरुने मेरे हृदयरूपी भूमिमें बोए और उससे समस्त सुन्दरसाथकी मनोकामनाएँ पूर्ण हुई.

ससी सूर कै कोट कहुं, कहुं तेज जोत प्रकास ।
ए वचन सरवे मोह लगे, अने मोहनो तो नास ॥ १२६

यदि मैं धामधनीके तारतम ज्ञानरूपी प्रकाशको करोड़ों सूर्य चन्द्रमाके प्रकाशकी उपमा दूँ, फिर भी वे तारतमके प्रकाशके सामने टिक नहीं सकते क्योंकि उपमाके ये सब वचन मोहतत्त्व तक ही पहुँचते हैं और मोहतत्त्व तो नाशवान् है.

हवे आणी जिभ्याए केम कहुं, मारा घर तणो विस्तार ।
वचन एक पोहोंचे नहीं, मोह मांहें थयो आकार ॥ १२७

अब मैं इस मायावी निर्बल जिह्वा द्वारा अखण्ड घर परमधामके विस्तारका वर्णन किस प्रकार करूँ ? क्योंकि इस वाणीका एक भी शब्द अखण्ड घर (परमधाम) तक नहीं पहुँचता है. हमारा यह आकार (शरीर) ही मोहके अन्तर्गत है.

मोह ते जे नथी कांइए, सत असंग सदाए ।
असत सतने मले नहीं, वाणी पोहोंचे न एणी अदाय ॥ १२८

मोह तो कुछ भी नहीं है अर्थात् वह नाशवान् है. वह सदैव सत्यसे असंग (अलग) ही है. इसलिए असत्य वस्तु सत्य तक कभी भी नहीं पहुँचती. इस प्रकार असत्यकी वाणी (इस झूठे संसारके शब्द) भी अखण्ड परमधाम तक नहीं पहुँच पाती है.

एक अरध लवो पोहोंचे नहीं, मारा घर तणो दरबार ।
जोगमाया लगे वचन ना आवे, ते पारने वली पार ॥ १२९

इस संसारके झूठे शब्दोंका आधा अक्षर भी मेरे अखण्ड घर परमधाम तक नहीं पहुँच पाता है. जब संसारकी वैखरी वाणी योगमाया तक भी नहीं पहुँच सकती अर्थात् योगमाया रचित रास मंडल (रासलीला) का वर्णन भी ठीकसे नहीं कर पाती है, तो उससे आगे अक्षरधाम और उससे भी आगे परमधाम तक कैसे पहुँच पाएगी ?

हुं वचन कहुं विध विधनां, पण क्यांहे न पामुं लाग ।
मारा घर लगे पोहोंचे नहीं, एक लवानो कोटमो भाग ॥ १३०

(फिर भी) मैं विभिन्न प्रकारके वचन कहती हूँ, परन्तु परमधामकी उपमाके लिए उपयुक्त शब्द ही नहीं मिल रहा है. इस नश्वर जगतके शब्दका करोड़वाँ भाग भी परमधामकी शोभाका वर्णन नहीं कर पाता है.

हुं अंगे रंगे अंगना संगे, करुं पोते पोतानी वात ।
बोलतां घणुं सरमाउं, तेणे न कहुं निध साख्यात ॥ १३१

सद्गुरु धनी कहते थे, 'मैं मेरी अङ्गना इन्द्रावतीके साथ समाहित हुआ हूँ, हम परस्पर अपने अन्तरङ्गकी बात करते है' इसलिए इस रहस्यको स्पष्ट करते हुए मुझे सङ्कोच होता है, अतः दुनियाके सामने इस निधिको प्रकट नहीं करती.

मारा ते घरनी वातडी, नथी कह्यानो क्यांहे विश्राम ।
कहुं तो जो कोई होय बीजो, गाम नाम ना ठाम ॥ १३२

हमारे घर परमधामकी बातें कहनेके लिए कोई योग्य ठिकाना (पात्र) ही नहीं है. ब्रह्मात्माओंके अतिरिक्त अन्य कोई हो तभी तो कहा जाए. संसारी जीवोंका तो कोई नाम गाँव या स्थान ही नहीं है अर्थात् वे तो अस्तित्व विहीन तथा नाशवान् हैं.

जिहां नथी कांई तिहां छे कहेवाय, ए बंने मोहनां वचन ।
ए वाणी मारी मुने हंसावे, ते माटे थाऊं छुं मुन ॥ १३३

जहाँ कुछ भी नहीं हैं वहाँ (संसारमें) परमात्मा हैं ऐसा कहा जाता है, परन्तु

ये दोनों (ब्रह्म है अथवा नहीं है) मोहके वचन हैं. अतः मेरी यह वाणी मुझे ही हँसा रही है. इसलिए (अन्दर परमधामका ज्ञान होनेपर भी) उसे बाहर प्रकट करनेमें मैं मौन होती हूँ.

एटलुं पण हुं तो बोलुं, जो साथने भरमनो घेन ।
वचन कही विधोगते, टालुं ते दुतिया चेन ॥ १३४

इतने वचन भी मैं इसलिए कह रही हूँ कि सुन्दरसाथ पर मायाके (अज्ञानता) भ्रमका नशा चढ़ा हुआ है. मैं चाहती हूँ, इन वचनोंको ठीकसे (विधिवत्) कहकर मायाके द्वैत भावको मिटा दूँ.

इन्द्रावतीसुं अतंत रंगे, स्याम समागम थयो ।
साथ भेलो जगववा, इन्द्रावतीने में कह्यो ॥ १३५

इन्द्रावतीकी अन्तरात्मामें धामधनीका समागम हो गया है. सद्गुरु कहते थे कि समस्त ब्रह्मसृष्टिको एकसाथ जागृत करनेके लिए मैंने इन्द्रावतीसे कहा है अर्थात् जागनीका उत्तरदायित्व इन्द्रावतीको सौंपा है.

प्रकरण १२ चौपाई ५०६

श्री कलस (गुजराती) सम्पूर्ण

श्री ५ नवतनपुरीधाम, जामनगर